सदस्य
ABCI
Member

बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन

विषय सूची

संपादकीय		2
अनुचिंतन		4
साक्षात्कार		6
लेख		
केंद्रीय बैंकिंग-स्वरूप, कार्य और कार्यपद्धति	डॉ. रमाकांत शर्मा	10
भारत में बासल-II का मूल्यांकन	निधि चौधरी	17
सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005	परवेज़ अख्तर	24
सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) का विकास-एक विवेचन	डॉ. शरद कुमार एवं पूर्णेन्दु कुमार	27
इधर-उधर से	श्रीमती सावित्री सिंह	33
ग्राहक सेवा: बैंकिंग की अनिवार्यता	देवराज	37
ग्रामीण क्षेत्रों को प्रदत्त कृषि ऋणों में बैंकों का योगदान	डॉ. नरेंद्र पाल सिंह	44
बीमा विपणन और बैंक	डॉ. सुबोध कुमार	50
पुरस्कृत निबंध	तपन कुमार प्रधान	54
पुस्तक समीक्षा		59
लेखकों से/ पाठकों से		64

संपादक - मंडल

सदस्य

डॉ. शरद कुमार
निदेशक, सांख्यिकी और प्रबंध सूचना विभाग
भारतीय रिज़र्व बैंक, मुंबई

के. सी. मिश्रा
महाप्रबंधक
कृषि बैंकिंग महाविद्यालय, पुणे

डॉ. रमाकान्त शर्मा
महाप्रबंधक
भारतीय रिज़र्व बैंक, मुंबई

प्रभुता व्यास
वरिष्ठ उपाध्यक्ष
भारतीय बैंक संघ, मुंबई

डॉ. सुरेश कुमार
उप महाप्रबंधक (राजभाषा)
भारतीय स्टेट बैंक, मुंबई

डॉ. गजेंद्र कुमार
सहायक महाप्रबंधक (राजभाषा)
इलाहाबाद बैंक, कोलकाता

उमाकांत स्वामी
सहायक महाप्रबंधक (राजभाषा)
बैंक ऑफ बड़ौदा, मुंबई

प्रबंध संपादक

सुश्री रूपम मिश्र
प्रभारी महाप्रबंधक (राजभाषा)
भारतीय रिज़र्व बैंक, मुंबई

कार्यकारी संपादक

पुष्प कुमार शर्मा
उप महाप्रबंधक
भारतीय रिज़र्व बैंक, मुंबई

सदस्य सचिव

के. सी. मालपानी
प्रबंधक (राजभाषा)

भारतीय रिज़र्व बैंक
राजभाषा विभाग
केंद्रीय कार्यालय, गारमेंट हाउस
वरली, मुंबई-400 018.

इस पत्रिका में प्रकाशित लेखों में दिये गये विचार संबंधित लेखकों के हैं । यह आवश्यक नहीं है कि भारतीय रिज़र्व बैंक उन विचारों से सहमत हो । इसमें प्रकाशित सामग्री को उद्धृत करने पर भारतीय रिज़र्व बैंक को कोई आपत्ति नहीं है बशर्ते स्रोत का उल्लेख किया गया हो।

सुश्री रूपम मिश्र द्वारा भारतीय रिज़र्व बैंक, राजभाषा विभाग, गारमेंट हाउस, वरली, मुंबई-400 018 के लिए संपादित और प्रकाशित तथा मयूर ट्रेडिंग कॉरपोरेशन, मुंबई-400 001 में मुद्रित।
इंटरनेट http://www.rbi.org.in/hindi पर भी उपलब्ध । E mail : rajbhashaco@rbi.org.in फोन : 2498 2076 फैक्स - 2498 2077
मुखपृष्ठ : सुधाकर वरवडेकर

संपादकीय

प्रिय पाठको,

'पर्णाल्लधीयसी भव'

(अथर्ववेद 10.1.29)

अर्थात मानव तू सूखे पत्ते से भी हल्का बन। अथर्ववेद की यह संकेतात्मक अवधारणा हमें विनम्र बनने का आह्वान करती है क्योंकि विनम्रता ही हमें मानसिक संतुलन के वांछित स्तर तक ले जाती है। मानसिक संतुलन या शांति आज के मानव संसाधन के विभिन्न पहलुओं के आधार के रूप में होती है भले ही आधुनिक नामकरण में उसे हम 'न्यूरोलिंग्विस्टिक' उपाय के रूप में जानते हों। विनम्रता एक मानवीय गुण है, संस्कार है, कुछ पाने की जिज्ञासा है और कुछ करने की इच्छा-शक्ति का दूसरा नाम है। अपवाद के रूप में कुछ लोग विनम्रता को चापलूसी की परिभाषा के दायरे में रखकर देखते हैं परंतु सनातन सत्य तो यही है कि-

'विद्या ददाति विनयम्; विद्या विनयेन शोभते'

इस सत्य का सामना मनुष्य अपनी बुद्धि विकास की यात्रा के पहले पड़ाव से करता है और जीवन भर इसे अपने आचरण में ढालने का प्रयास करता है। वस्तुतः देखा जाए तो आज विद्या का प्रचार-प्रसार इतना हो गया है कि सभी *'विद्यावान'* है और तार्किक दृष्टि से कहा जाए तो सभी विनयशील या विनम्र हैं। परंतु क्या वास्तव में ऐसा है, संभवतः नहीं क्योंकि *'विद्या ददाति विनयम्'* एक शाब्दिक संदेश ही नहीं है, अपितु उसके भीतर एक गहन दार्शनिक समझ छुपी हुई है- हमें उसे समझना होगा तभी हम विनम्रता को समझ पायेंगे या मानसिक शांति का कम-से-कम एक सोपान तो छू पायेंगे। विद्या से तात्पर्य केवल डिग्री या किताबी ज्ञान ही नहीं होता, विद्या शिक्षण या प्रशिक्षण केंद्रों की चारदीवारी में बंधी हुई नहीं होती, विद्या गुरु के स्पर्श से प्राप्त कोई चमत्कारी शक्ति भी नहीं है, विद्या को हम किसी भी श्रेणी में नहीं बांध सकते क्योंकि विद्या वस्तुतः स्वयं को समझने का एक साधन है, विद्या वस्तुतः आत्मज्ञान है, विद्या आत्म साक्षात्कार है-यही विद्या हमें विनम्र बनाती है, विनय को लाती है-ऐसा विनय जहां विद्या स्वयं शोभा पाती है, ऐसी विद्या जो मनुष्य को अथर्ववेद की सूक्ति के अनुसार सूखे पत्ते की तरह हल्का बनाती है, अर्थात् हमारे भीतर के अहं को साध लेती है। दूसरे शब्दों में कहें तो, विद्या हमारा साधन है और विनम्रता मनुष्य का ध्येय। पर कितने लोग इससे सहमत होते हैं।

विनम्रता की पहली सीढ़ी है, अच्छा श्रोता बनना, दूसरी सीढ़ी है अपनी प्रतिक्रियाओं को लचीलापन देते हुए शृंखलाबद्ध करना, तीसरी है- अपनी बात के समर्थन हेतु सामग्री जुटाना, चौथी सीढ़ी है-कम-से-कम शब्दों में अपनी बात स्पष्ट करना और पांचवीं सीढ़ी है कि अपनी बात किसी पर नहीं थोपना। इन बातों को समझने का सबसे बेहतर तरीका है स्वयं का विश्लेषण करते हुए अपनी सीढ़ियां या सोपान खुद बनाना। परंतु मानव स्वभाव है, हम ऐसा नहीं करते क्योंकि हम यह मानकर चलते हैं कि हम जो कुछ भी कर रहे हैं-वही ठीक है- जबकि सामान्यतः इसके विपरीत ही होता है।

प्रश्न उठता है कि इस प्रकार आत्म विश्लेषण, विनम्रता आदि की भूमिका बैंकों में क्या हो सकती है। वस्तुतः बैंकिंग एक 'सेवा उद्योग' है और सेवा में ग्राहक सर्वोपरि होता है। बेहतर सेवा देना आज बैंकिंग की पहली जरूरत है और वह तब ही आ सकती है जब हम विनम्र हों। ग्राहकों को श्रोताओं की जरूरत है,कभी-कभी तो ऐसा अनुभव होता है कि यदि हम किसी की बात को पूरा सुन लेते हैं तो सामने वाले की समस्याओं का समाधान अपने-आप हो जाता है। हमारी एचआर नीतियों में विनम्रता का पाठ एक औपचारिक जरूरत के अनुसार होता है जबकि हमारी एचआर नीतियों को विनम्रता की सीख को अपना आधार बनाना चाहिये। संभवतः किसी दिन ऐसा होगा जब हम यजुर्वेद (18.75) के अनुसार ***'उत्तानहस्ता नमसोपसद्यः'*** को अपना पायेंगे अर्थात् जब दूसरे से मिलें तो दोनों हाथ उठाकर नमन करें। विनम्रता का पाठ यहीं से शुरू होता है।

अनुचिंतन

पाठकों ने कई बार केंद्रीय बैंकिंग की जानकारी की अपेक्षा की और उसी परिप्रेक्ष्य में इस बार हम एक परिचयात्मक लेख दे रहे हैं। हमारा प्रयास, सदा ही, इस पत्रिका में पाठकों की रुचि एवं आवश्यकता के अनुसार सामग्री उपलब्ध कराने का रहता है क्योंकि हम हिंदी भाषा में बैंकिंग की जानकारी की उपलब्धता की महत्ता को समझते हैं। हिंदी में पिछले 21 वर्षों से बैंकिंग समझाने का हमारा यह दायित्व हमें सीधे जनता से जोड़ता है और यही हमारी कामना है। 'साक्षात्कार' में इस बार आपकी मुलाकात होगी **देना बैंक के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक *श्री डी. एल. रावल*** से। आशा है यह अंक भी आपकी अपेक्षाओं की पूर्ति करेगा। आपकी प्रतिक्रियाएं हमें रचनात्मक सहयोग देती हैं। अतः प्रतीक्षा रहेगी। अस्तु,

सादर,

(रूपम मिश्र)

अनुचिंतन

आपके कार्यालय की गृह पत्रिका बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन की प्रति प्राप्त हुई। धन्यवाद। मुखपृष्ठ से अंतिम पृष्ठ तक पत्रिका बहुत ही रुचिकर एवं जानकारियों से परिपूर्ण है। सभी रचनाएं रोचक व उपयोगी हैं। वर्तमान की घटनाओं पर जैसे 'भारतीय बैंकों में ज्ञान प्रबंधन', 'आर्थिक मंदी तथा भारतीय अर्थव्यवस्था', 'समय संभाले रखिए', लेख द्वारा बहुत ही अच्छे ढंग से प्रकाश डाला गया है। आप मात्र राजभाषा का ही नहीं अपितु हिंदी साहित्य के विकास, प्रचार प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहे हैं। पत्रिका सदैव इसी तरह भेजते रहने की कृपा करें।

संपादक मंडल को बधाई एवं हार्दिक शुभकामनाएं

● **मेधा परुळकर**
सहायक प्रबंधक
भारतीय साधारण बीमा निगम
चर्चगेट, मुंबई

आपके द्वारा प्रकाशित बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन वर्ष 21 अंक-2, जनवरी-मार्च 2009 ने मुझे बहुत प्रभावित किया। यह एक संग्रहणीय अंक है जिसमें बैंकिंग से संबंधित विभिन्न विषयों जैसे 'बैंकों में सतर्कता-विभिन्न आयाम', 'भारतीय बैंकों में ज्ञान प्रबंधन', 'आर्थिक मंदी तथा भारतीय अर्थव्यवस्था' पर विद्वत लेखकों ने बहुत ही सटीक जानकारी, समस्यायें एवं समाधान प्रस्तुत किया है। संपादक महोदया अपने संपादकीय में वैदिक श्लोकों के प्रयोग से मन एवं मस्तिष्क को ऊर्जा प्रदान करती है। मेरे विचार से बैंकिंग विषय पर हिंदी की पत्र-पत्रिकाओं में यह एक सर्वोत्तम पत्रिका है।

● **सुशील कुमार मेहरोत्रा**
सहायक महाप्रबंधक
सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया
क्षेत्रीय कार्यालय, कोलकाता

बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन वर्ष 21 अंक-2, जनवरी-मार्च 2009 से रूबरू हुआ। चिंतनशील संपादकीय से शुरुआत करता हुआ यह अंक बैंकिंग एवं आर्थिक मुद्दों सहित ज्ञानवर्धक सामग्री को अपने आप में समेटे बहुत ही उत्तम बन पड़ा है।

पत्रिका के प्रत्येक अंक में किसी-न-किसी राष्ट्रीयकृत बैंक के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक का साक्षात्कार प्रकाशित कर आप कार्यपालकों के लिए निश्चय ही प्रेरणास्पद सामग्री उपलब्ध कराते हैं। इस हेतु हमारा साधुवाद स्वीकार करें। श्रीमती सावित्री सिंह की प्रस्तुति 'इधर-उधर से' जानकारी से भरपूर है। 'बैंकों में सतर्कता-विभिन्न आयाम' तथा 'डिपोजिटरी (डी मेट) प्रणाली' जैसे लेखों के माध्यम से पत्रिका में उपयोगी सामग्री प्रस्तुत की गई है।

संपादक मंडल को बहुत-बहुत बधाई।

● **राजीव**
महाप्रबंधक
इलाहाबाद बैंक
प्रधान कार्यालय,कोलकाता

बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन का जनवरी-मार्च 2009 अंक मिला। प्रेषण के लिए आभार। पत्रिका का सामग्री संकलन अत्यंत रोचक, ज्ञानवर्धक, पठनीय एवं अनुकरणीय है। सम्पादकीय ने तो मन को छू लिया है। समयोचित सामग्री में विषय की विविधता और शैलीगत वैविध्य है। पत्रिका की सबसे महत्वपूर्ण बात है कि इसमें प्रकाशित सारगर्भित सामग्री सहेजने एवं संग्रह करने को मजबूर करती है। प्रत्येक अंक में बेहतरीन सामग्री प्रकाशित करने के लिए मैं आपको हार्दिक बधाई देता हूं। बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन के निरंतर प्रवाह की कामना।

● **डी. एस. चौहान**
विवेक नगर, चांदपुर
बिजनौर

आकर्षक मुख पृष्ठ आईसीआईसीआई बैंक की प्रबंध निदेशक और मुख्य कार्यपालक अधिकारी श्रीमती चंदा कोचर से 'साक्षात्कार', श्रीमती सावित्री सिंह का ज्ञान प्रदायक 'इधर-उधर' से तथा श्री के.

सी. मालपानी द्वारा लिखित 'म्युचूअल फंड' विशेष ज्ञान प्रदान करने वाले आलेख सहित बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन का अप्रैल-जून 2009 का अंक सराहनीय है।

● **डा. राजीव कुमार सिन्हा**
टी. एम. भागलपुर विश्वविद्यालय
भागलपुर

वर्ष 21अंक 2 में श्री मुकेश पोपली का लेख बैंकों में 'सतर्कता-विभिन्न आयाम'- वर्तमान घड़ी में बैंकों में हर क्षेत्र में सतर्कता का अहम् महत्व दर्शाता है। प्रत्येक विभाग में व्याप्त संभाव्य खतरे से बचने हेतु बैंकर को सदैव जागरूक रहने को बाध्य करता है। फलतः बैंकर अपने कैरियर में निष्कंटकता के साथ सफल व सक्षम रह सकता है। वैश्विक आर्थिक मंदी के दौर में विकासशील देश भारत की अर्थव्यवस्था अन्य देशों की तुलना में कितनी प्रभावित हुई तथा कुशल भारतीय बैंकरों की अर्थनीति से अमेरिकन बैंकों की तुलना में भारतीय बैंक वित्तीय संकट से कैसे बचे यह डॉ. राजीव कुमार सिन्हा के लेख में स्पष्ट है। अमेरिकन व अन्य विकसित देशों को इस बात की सावधानी बरतने हेतु संकेत है कि केवल अर्द्ध विकसित गरीब और विकासशील राष्ट्रों को कैसे सामाजिक, आर्थिक विकास के क्षेत्रों में दी गई राशियां ही माफ की जायें जिससे अपने राष्ट्र या कर्ज लेने वाले राष्ट्रों की बहुसंख्यक निर्धनतम आबादी लाभान्वित होती रही हो। सिन्हाजी ने प्रत्येक बात पाठक को स्पष्टतः बताई है। इसी प्रकार से पुरस्कृत निबंध भी दोनों पत्रिकाओं में उच्च श्रेणी के अध्ययनकर्ता लेखकों द्वारा प्रस्तुत किए हुए हैं जिनमें अद्यतन चित्रण किया गया है। राजेंद्र सिंह, सेवानिवृत्त अधिकारी द्वारा प्रस्तुत निबंध 'क्रेडिट कार्ड का बढ़ता उपयोग : वरदान या अभिशाप' - सभी स्तर के नागरिकों के लिए ज्ञानवर्धक है। पत्रिका का प्रारम्भ (सम्पादकीय) श्लोकों द्वारा होना अतिसराहनीय है। आदर सहित समूचे संपादकीय स्टाफ को विशिष्ट प्रकाशन हेतु शुभकामनायें।

● **हरीशचंद्र अग्रवाल**
अकोला,महाराष्ट्र

बैकिंग चिंतन-अनुचिंतन पत्रिका का अप्रैल-जून 09 अंक पढ़कर बहुत प्रसन्नता हुई। पत्रिका ज्ञानवर्धक सामग्री से परिपूर्ण है। पत्रिका का कवरपृष्ठ आकर्षक है। मुद्रण श्रेष्ठ है।

संपादकीय प्रभावी एवं विचारों से भरा है। बधाई स्वीकारें।

● **श्याम सुंदर 'सुमन'**
भीलवाड़ा

आपकी सुप्रतिष्ठित पत्रिका बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन का अप्रैल-जून 2009 अंक मिला। बैंकिंग जैसे नितांत व्यावसायिक क्षेत्र में 'बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन' के माध्यम से, आप हिंदी का बिगुल बहुत ही प्रभावी ढंग से बजा रहे हैं। इसकी जितनी भी तारीफ की जाए, वह कम ही है।

मैं यह देखकर बहुत प्रभावित हुआ हूं कि बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन के उक्त अंक में अत्यन्त रोचक, पठनीय, स्तरीय एवं ज्ञानवर्धक सामग्री छपी है। विशेषकर, आईसीआईसीआई की युगान्तकारी अध्यक्षा श्रीमती चंदा कोचर से आपके द्वारा लिया गया साक्षात्कार बहुत ही सामयिक, मर्मस्पर्शी एवं प्रेरक है। वस्तुतः यह संवाद से संवेदना रूपी अलख जगाने वाला लेख है। विश्वास है, आगे भी, आपके कुशल संपादन में ऐसे ही अच्छे अंक निकलते रहेंगे।

● **डॉ. देशबन्धु राजेश तिवारी**
सिंडिकेट बैंक
क्षेत्रीय कार्यालय, लखनऊ

अप्रैल-जून 2009 अंक प्राप्त हुआ। पत्रिका के माध्यम से आईसीआईसीआई की मुख्य कार्यकारी अधिकारी और प्रबंध निदेशक श्रीमती चंदा कोचर से रूबरू होने का अवसर मिला। 'बासल समझौता-एक परिचय'- निधि चौधरी उल्लेखनीय लगा। म्यूचुअल फण्ड (पारस्परिक निधियां) में म्यूचुअल फंड संबंधी काफी जानकारियां मिली है। मेरा अनुरोध है कि पत्रिका तिमाही खत्म होने के तुरन्त बाद पाठकों के बीच पहुंच जानी चाहिए।

● **उपेंद्र कुमार श्रीवास्तव**
मार्केटिंग अधिकारी
पंजाब नैशनल बैंक, भरतपुर

साक्षात्कार

बैंकों को ग्राहक का एडवाइज़र बनना होगा

पिछले अंक में हमने आईसीआईसीआई बैंक की प्रबंध निदेशक श्रीमती चंदा कोचर से आपकी मुलाकात करवाई थी और हमें प्रतिक्रियाओं के रूप में जो प्रतिसाद मिला वह इस स्तम्भ की अहमियत दर्शाता है। पाठक जिस रुचि से वरिष्ठ बैंकरों के बारे में जानना चाहते हैं वह न केवल संपादक मंडल के लिए एक सराहनीय एवं प्रेरणादायक संकेत है, परंतु चुनौती भी है कि इसे और अधिक रुचिकर एवं व्यापक बनाया जाए।

साक्षात्कार की शृंखला में इस बार पाठकों की मुलाकात होगी - **देना बैंक के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक श्री डी. एल. रावल जी** से। हंस-मुख, डाउन टु अर्थ, अपनी बात बेबाक तरीके से कहनेवाले श्री रावल ने बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन की सराहना करते हुए कहा कि वे इसे नियमित रूप से पढ़ना चाहेंगे। स्कूल और कॉलेज में विज्ञान विषय के अध्येता रह चुके श्री रावल जी पंजाब नैशनल बैंक से अपना कैरियर प्रारंभ कर केनरा बैंक पहुंचे और फिर देना बैंक के अध्यक्ष बने। कैरियर के प्रारंभ में ही अध्यक्ष बनने की इच्छा से उनकी सोच का अन्दाजा लगाया जा सकता है। आइये जानते हैं देना बैंक के अध्यक्ष के विचार उनकी अपनी जुबानी।

● सर, देना बैंक, अपने आपको 'ट्रस्टेड फैमिली बैंक' के रूप में प्रमोट करता है, आप कुछ कहना चाहेंगे?

☞ डेफिनेटली, देखिये मेरा यह मानना है कि बैंक और ग्राहक का संबंध विश्वास का संबंध है, ट्रस्ट का संबंध है। हमारे जो ग्राहक हैं वे आज के नहीं वर्षों से ग्राहक हैं, और मैं समझता हूं कि इस प्रकार पीढ़ी-दर-पीढ़ी जो रिलेशनशिप डेवलप हुई है उसके पीछे कई कारण हैं- पहला तो यह है कि देना बैंक का परसेप्शन क्लियर है, जो है, वह है, और दूसरा है हमारे 'लोगो' में देवी लक्ष्मी का होना - धन और लक्ष्मी का संबंध हम सभी जानते हैं, तो एक फेस डेवलप हो गया है कि लक्ष्मी वाला बैंक है देना बैंक - भरोसे का बैंक - बस ग्राहक जुड़ते गये और संबंध बनते गये।

● पर सर, उन्हें जोड़े रखना भी तो मुश्किल काम है, विशेषकर आज के जमाने में?

☞ सही कहा आपने-कोई भी ग्राहक किसी बैंक में सिर्फ लेन-देन के लिये ही नहीं जुड़ता, यह तो उसका व्यावहारिक पक्ष है - वास्तव में जुड़ाव होता है भावना से और भावना आती है जब उसे लगता है कि लेन-देन सेफ हो, अच्छे-बुरे समय में साथ खड़ा होने वाला कोई हो, यह पूरी तरह से ट्रान्सपरेंट हो-हमने अपने कामकाज में यही तीनों बातें पैदा कीं, हमने भरोसा बनाये रखा, हमने साथ खड़े होने या

अपनेपन का अहसास कराया और आप भी मानते हैं कि हमारे यहां अधिकतम पारदर्शिता है। वैसे मेरा यह भी मानना है कि आप केवल बैंकर बनकर लोगों को नहीं जोड़ सकते हैं, हमें उनका एडवाइज़र भी बनना पड़ेगा। सही वक्त पर सही सलाह देना-कस्टमर को जोड़ सकता है, आज कस्टमर को एडवाइज़र की जरूरत है।

- आपने कहीं पर कहा था कि देना बैंक को अपनी आस्तियों की गुणवत्ता में सुधार लाना है, अर्थात् 'नीड टू इम्प्रूव एसेट क्वालिटी' को समय की जरूरत बताया - क्या आप ऐसा कर पाये हैं?

☞ भई, किसी को भी ठोस आधार देने के लिये बहुत जरूरी है उसकी एसेटस् की क्वालिटी और यह सिस्टम में ही आ जाना चाहिये। मैंने जब देना बैंक का काम देखना शुरू किया तो मेरी यह पहली प्रायोरिटी रही - इसके लिये जरूरी था स्किल्ड टीम का होना - मैंने इन्सेन्टिव क्रेडिट मैनेजमेंट प्रोग्राम चलाये ताकि एक टीम तैयार हो सके - मैंने 200 अधिकारियों की एक टीम खड़ी की - और अगला काम किया इन्डस्ट्री के लिये जरूरी नॉलेज को अपडेट करना - यह नॉलेज फायनेन्शियल भी होता है और टेक्निकल भी - इस प्रकार चारों तरफ से हमने एफर्ट्स किये ताकि एसेट्स की क्वालिटी में सुधार हो। हमने रिकवरी के लिये अलग जीएम तय किया और वीकली आधार पर हम उसका रिव्यू करते हैं और जहां जरूरी है वहां तत्काल करेक्टिव उपाय भी करते हैं। रिकवरी और स्ट्रेस एकाउंट मैनेजमेंट हमारी इस पहल के गवाह हैं और हमने कोशिश की है कि हमारा एनपीए न बढ़े - ईडी के लेवल की कमिटी इसे रेगुलर देखती है ताकि जो मिशन मैंने शुरू किया है उसे सफल बनाया जा सके। है ना, हमारा प्रयास।

- केनरा बैंक से आप यहां आये, एक चेयरमैन के रूप में - देना बैंक के चेयरमैन का सपना क्या है?

☞ हं..हं..हं, मैं जब यहां आया था और मैंने स्टाफ से कहा कि मेरा सपना है - देना बैंक की मोस्ट प्रिफर्ड बैंक की इमेज बनाना तो एक सदस्य ने सवाल किया कि सर हम साइज में छोटे हैं बाकी लोगों से तुलना कैसे करेंगे - तो आई सेड, कि यह बात बात दिमाग से निकाल दो - परसेप्शन बढ़िया हो, कस्टमर फोकस्ड बैंक हो तो - इमेज बढ़िया बन जाती है - 'टू बिग टू फेल' कहना एक मिथक है क्योंकि बड़े - बड़े फेल हो जाते हैं - यहां साइज कोई मायने नहीं रखती - काम मायने रखता है, पर्फोमेन्स मायने रखता है - लोगों को मेरी बात समझ में आयी और हमने कारोबार को एक दिशा दे दी - यही सपना होता है एक चेयमैन का - मेरा भी यही था जो पूरा हो रहा है -

- यह तो चेयरमैन की बात हुई-तो क्या शुरू से चेयरमैन बनने का भी सपना था?

☞ यस, आप कह सकते हैं, हां। जब मैं स्केल - II में था तब सभी से पूछा गया था कि हमारा लक्ष्य क्या है - मैंने लिखा था चेयरमैन बनना-आपको यकीन नहीं होगा - बस मेरा ही लेख चुना गया था - बाद में अगले स्केल में भी यही प्रश्न था - और जवाब वो ही था। चेयरमैन बनना - मेरा ऐसा मानना है कि जब आप बड़ा सोचेंगे तो ही बड़ा बनेंगे - एक बार आप ऐसी थिंकिंग शुरू कर दें - आपका बिहेवियर डिफ्रेंट हो जायगा। आपकी सोच बदल जायेगी। मेरी पोस्टिंग वर्ष 1976 में एक गांव में हुई - मैंने छः महीने में पूरे गांव को बैंक से जोड़ दिया - पूरा गांव मुझे बेटे की तरह मानने लगा - आज भी वो ऐसा ही समझते हैं - अपने आपको मॉस से जोड़ना ही आपकी सफलता है। अपनी सोच को मच बिगर दैन अदर्स रखो - अपनी क्षमता को कमतर क्यों मानें। दस किलोमीटर चलने की सोचो उस वक्त यह मत सोचो कि भई मैं तो दो किलोमीटर भी नहीं चल सकता - जहां आपने ऐसा सोचा - आप दो किलोमीटर भी नहीं चल पायेंगे। मैंने 25 प्रतिशत का टार्गेट रखा और 26 हासिल किया। यदि आप सिन्सियर हैं, कमिटेड हैं तो स्काई इज दि लिमिट - पर सोचना आपको ही पड़ेगा।

● चेयर मैन नहीं होते तो..?

☞ वैज्ञानिक होता - मेरा साइन्स का ही बैकग्राउंड है।

● आप कहां से इतनी प्रेरणा लाते हैं, या एनर्जी पाते हैं?

☞ तीन - चार चीजें हैं जो मुझे ताकत देती हैं-अपने पेरेन्टस् के आशीर्वाद, परिवार के साथ समझदारी भरा रिश्ता, वर्कवाइज़ अच्छा कल्चर अर्थात लोगों को आपकी लीडरशिप में फेथ होना चाहिये - और अंतिम बात है भगवान की कृपा। यह चार चीजें आपके पास हैं तो आप सफल होते हैं, ऊर्जावान होते हैं। गुरूनानक साहब की एक सूक्ति है जिसका अर्थ यह है कि 'जो कुछ मिला उसके लिये ईश्वर का आभारी होना चाहिये और जो नहीं मिला उसके लिये सब्र करना चाहिये'। इस बात को जिन्दगी में लागू कर देंगे तो अपने आप शक्ति आ जाती है। एक बात और, बन्दे को अपने आप पर भी भरोसा होना चाहिये - जरूरी नहीं है कि हर बार सफल ही हो - असफल भी हो सकते हैं - पर मेरा ऐसा मानना है कि उस वक्त आपका संकल्प डगमगाना नहीं चाहिये, फर्म होना चाहिये, अपने विज़न या सिद्धांत को छोड़िये मत, अप्स एण्ड डाउन तो आते ही रहते हैं।

● और जब बात आती है टीम को मोटिवेट करने की तब..?

☞ अपने व्यवहार से दिखाओ, सिर्फ बातें मत करिये, जो कुछ आप कहते हैं, उसे व्यवहार में उतारिये - अपने शब्दों का मान करें, वादा निभायें, पूरा स्टाफ आपके साथ होगा और दूसरी बात पारदर्शी बनें - कुछ हिडेन एजेंडा मत रखें - कठिनाइयों में उनका साथ दें, जहां हाई पोटेन्शियलिटी दिखे, उसे ग्रूम करें, कम पोटेन्शियलिटी वालों को ऊपर की तरफ खींचे - हां लेकिन ध्यान रखें - देयर शुड नॉट बी एनी प्लेस फॉर नॉन-परफॉर्मर्स-वहां सख्त होना पड़ेगा - ये हैं अपने साथ काम करने वालों के साथ जुड़ने का मंत्र - देखिये - हम कोई मोनेटरी बेनीफिट तो दे नहीं सकते - परंतु उनकी पोस्टिंग या प्रमोशन का ध्यान तो रख सकते हैं - ट्रेनिंग का ध्यान रख सकते हैं, विदेश में ट्रेनिंग को भेज सकते हैं-बस लोग आपके साथ जुड़ते रहेंगे।

● बैंकिंग, ट्रेडिशनल बैंकिंग से बदलकर नये रूप में आज उभर रही है - क्या एक सरकारी क्षेत्र का बैंक होने के नाते हम तैयार हैं?

☞ परिवर्तन तो होना ही है, लेकिन मेरा ऐसा मानना है कि यदि हम चार आस्पेक्ट मन में रखे तो किसी भी परिवर्तन को झेल सकते हैं। पहला है कॉस्ट अर्थात् लागत। अपने प्रोजेक्ट की, सेवा की लागत कम रखना, दूसरा है, टाइम मैनेजमेंट - अर्थात् सभी सेवाएं समय पर या समय से पहले कर देना, तीसरा है - क्वालिटी ऑफ सर्विसेस - हम कैसी सेवा देते हैं - यह बात बहुत मायने रखता है और चौथी बात है - टेक्नॉलॉजी का निरंतर अपग्रेडेशन - ये चार हथियार यदि आपके पास हैं तो आप किसी भी स्पर्धा में उतर जाएं सफल ही होंगे - हमने देना बैंक में यही किया है और हमारी इमेज इन्हीं के आधार पर बनी हुई है।

● सर, यद्यपि बैंकिंग ग्लोबल हो गयी है तथापि भारतीय बैंकों पर सामाजिक जिम्मेदारी भी है। देना बैंक अपने सामाजिक दायित्व को कैसे पूरा करने का प्रयास करता है?

☞ देखिये, आप सोशियल सिस्टम से अलग होकर काम नहीं कर सकते। भारतीय बैंकों का मकसद केवल प्रोफिट कमाना ही नहीं है बल्कि समाज को कुछ देने का भी दायित्व बनता है। हमने गरीब लड़कियों के लिये 1500/- रुपये की छात्रवृत्ति शुरू की जो सरकारी स्कूलों में पढ़ती हैं। हम गरीब मजदूर स्तर के लोगों को बैंकिंग के दायरे में लाने के साथ-साथ छोटे-छोटे उद्यमियों को प्रशिक्षण देते हैं,एवयरनेस पैदा करते हैं ताकि उनके साथ-साथ उनका परिवार भी बैंकिंग को समझे और अपने पैरों पर खड़ा हो सके। आइबीए की समिति का चेयरमैन भी हूं - और फायनेन्शियल इन्क्लूज़न के मिशन को आगे बढ़ाने से लगातार जुड़ा रहा हूं। टेक्नॉलॉजी की लागत को कम करके अधिक लोगों से जुड़ा जा सकता है। यही हम देना बैंक में कर रहे हैं।

- चुनौतियां ज्यादा हैं, हमारे प्रशिक्षण की सुविधाएं पूरी नहीं पड़ती ना.. आप क्या सोचते हैं?

☞ सही कहा आपने - हमारा ट्रेनिंग सिस्टम अभी उस स्तर का नहीं है जितना हमें चेंजेज और चैलेंजेज़ मिल रहे हैं। हमें सिस्टम को बदलना होगा ताकि दुनिया के बराबर आ सकें। सरकार या रिज़र्व बैंक किसी-न-किसी को पहल करनी होगी। बैंकिंग में रिज़र्व बैंक आगे आ सकता है, और सायबर क्राइम आदि में स्टेट या सेंट्रल गवर्नमेंट साथ दे सकती है। सबको मिलकर कोई रास्ता तो निकालना ही चाहिये तब ही हम बाज़ार की मांग के हिसाब से ट्रेनिंग तैयार कर पायेंगे।

- बैंकिंग में भारतीय भाषाओं, विशेषकर हिंदी के बारे में क्या लगता है आपको?

☞ भई बैंकिंग को घर-घर पहुंचाना है तो उसकी भाषा में ही बात करनी होगी - हिंदी राष्ट्र के स्तर पर है, पर हमें लोकल लेवल पर क्षेत्रीय भाषाओं को साथ लेकर चलना होगा - केवल अंग्रेजी से काम नहीं चलनेवाला।

- सर यंग बैंकर्स को कुछ कहना चाहेंगे?

☞ यंग बैंकर्स या जो नये आनेवाले हैं, उनको अपने आपसे यह पूछना चाहिये कि वे बैंक में क्यों आ रहे हैं, पैसों के लिए या फिर व्यक्तित्व विकास के लिए - माना कि बैंकिंग में पैसा भी ठीक है परंतु उससे ज्यादा यहां ग्रो होने के लिये स्कोप ज्यादा है, चाहे बैंकिंग हो या टेक्नॉलॉजी,इंडिविज्युअल स्तर पर फायदा ज्यादा है यदि सोचें तो। सबसे पहले अपना माइन्ड सेट कर लें - फिर तो जैसा मैंने कहा है स्काई इज दि लिमिट। है ना....

प्रस्तुतीकरणः

डॉ. पुष्पकुमार शर्मा

- देना बैंक की स्थापना **देवकरण नानजी** के परिवार द्वारा 26 मई, 1938 को **देवकरण नानजी बैंकिंग कंपनी लिमिटेड** के नाम से की गई थी।
- यह 1939 में सार्वजनिक लिमिटेड कंपनी में परिवर्तित हुआ और कालांतर में इसका नाम बदल कर देना बैंक लिमिटेड हो गया।
- जुलाई, 1969 में 13 अन्य बड़े बैंकों के साथ देना बैंक राष्ट्रीयकृत हुआ तथा अब वह बैंकिंग कंपनी (उपक्रमों का अधिग्रहण एवं हस्तांतरण) अधिनियम, 1970 के अधीन गठित एक सरकारी क्षेत्र का उपक्रम है। बैंकिंग अधिनियम, 1949 के अंतर्गत बैंक, बैंकिंग कारोबार करने के अलावा बैंकिंग विनियमन अधिनियम, 1949 की धारा 6 में यथावर्णित अन्य कारोबार भी कर सकता है।

देना बैंक
DENA BANK
(भारत सरकार का उद्यम)
विश्वस्त पारिवारिक बैंक

देना बैंक का प्रतीक लक्ष्मी का प्रतिरूप है, जो हिंदू पुराणों के अनुसार समृद्धि की देवी हैं।

केंद्रीय बैंकिंग - स्वरूप, कार्य और कार्यपद्धति

● डॉ. रमाकांत शर्मा
महाप्रबंधक
भारतीय रिज़र्व बैंक, मुंबई

प्रत्येक देश की बैंकिंग और वित्तीय व्यवस्था में केंद्रीय बैंक देश के 'शीर्ष बैंक' के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आज किसी भी देश में बिना केंद्रीय बैंक के बैंकिंग क्रियाकलापों के सुचारु संचालन की कल्पना नहीं की जा सकती। लेकिन, एक समय था जब विभिन्न बैंकिंग संस्थाएं अपने-अपने तरीके से कार्य करती थीं और केंद्रीय बैंक जैसी कोई संस्था अस्तित्व में नहीं थी। ब्रिटेनिका ऑन-लाईन एनसायक्लोपीडिया के अनुसार केंद्रीय बैंक की अवधारणा की शुरुआत बार्सिलोना में वर्ष 1401 में 'तौला डि कान्वी' नामक (The Tauladi canvi) म्युनिसिपल बैंक की स्थापना से मानी जा सकती है। इसकी स्थापना सरकारी और निजी जमाराशियों की सुरक्षा की दृष्टि से की गई थी। लेकिन, इससे यह अपेक्षा भी की जाती थी कि वह बार्सिलोना सरकार की निधियों की आवश्यकता को पूरा करे, जिसमें विशेष रूप से सैनिक व्ययों के लिए धन उपलब्ध कराना शामिल था। इस काम को अंजाम देने के लिए इसने बार्सिलोना म्युनिसिपल गवर्नमेंट के लिए भुगतान करना तथा बांड जारी करना शुरू किया। बार्सिलोना सरकार ने उक्त बैंक को सरकार के अलावा किसी भी अन्य व्यक्ति या संस्था को ऋण देने की अनुमति प्रदान नहीं की थी। ऋण की अत्यधिक मांग के कारण 'तौला डि कान्वी' ने अपनी जमाराशियों की परिवर्तनीयता को वर्ष 1406 में समाप्त कर दिया, जिसकी वजह से कालांतर में इसका समापन करके पुनर्गठन किया गया।

केंद्रीय बैंक की अवधारणा की शुरुआत बार्सिलोना में वर्ष 1401 में 'तौला डि कान्वी' नामक (The Tauladi canvi) म्युनिसिपल बैंक की स्थापना से मानी जा सकती है। इसकी स्थापना सरकारी और निजी जमाराशियों की सुरक्षा की दृष्टि से की गई थी।

केंद्रीय बैंक की अवधारणा को बल मिलने और इसके विकास के संदर्भ में वर्ष 1694 में ब्रिटेन में स्थापित 'बैंक ऑफ इंग्लैड' का उल्लेख किया जाना अपरिहार्य है। इसकी स्थापना फ्रांस के विरुद्ध युद्ध में ब्रिटिश सरकार को 1.2 मिलियन पौंड का अग्रिम दिये जाने के उद्देश्य से की गई थी। पर, यह आगे चल कर विश्व की सर्वाधिक शक्तिमान और प्रभावशाली वित्तीय संस्था बन गई। इसके चार्टर के अनुसार इसे बैंक नोट जारी करने का एकाधिकार मिल गया। यह पहला ऐसा सार्वजनिक बैंक था जिसने आधुनिक केंद्रीय बैंक द्वारा किए जाने वाले अधिकांश काम शुरू किये और 19 वीं शती के उत्तरार्ध तक इसने सिर्फ अपने लाभ को देखने के बजाय इंग्लैंड की बैंकिंग और मौद्रिक प्रणाली की अखंडता और सुव्यवस्थित कार्यचालन की आधिकारिक जिम्मेदारी संभालना प्रारंभ कर दिया। इसके आकार और प्रतिष्ठा से प्रभावित होकर अन्य बैंक इसके पास अपनी जमाराशियां रखने लगे और आवश्यकता पड़ने पर उधार लेने लगे। धीरे-धीरे यह अंतर बैंक ऋण निपटान प्रक्रिया से भी जुड़ा, जिसके परिणामस्वरूप इसे 'बैंकों के बैंक' के नाम से जाना जाने लगा और बैंकिंग तथा वित्तीय क्षेत्र में इसकी स्थिति बहुत महत्वपूर्ण बन गई।

वर्ष 1844 में पील्स अधिनियम (Peel's Act) पास हुआ था, जिसे सामान्यतः बैंक ऑफ इंग्लैंड के चार्टर से जाना जाता है। इस चार्टर की इस आधार पर आलोचना की गई कि इससे बैंक ऑफ इंग्लैड को बैंकिंग प्रणाली को प्रभावित करने का ऐसा अधिकार दे दिया गया जिससे अन्य बैंकों का स्वतंत्र रूप से काम करने का अधिकार छिन गया था। इससे स्वस्थ प्रतिस्पर्धा पर कुठाराघात हुआ जो सही नहीं था। लेकिन बैंकिंग प्रणाली के नियमन और सुचारु संचालन को दृष्टि में रखते हुए, अधिकांश विद्वान बैंक ऑफ इंग्लैंड चार्टर से सहमत थे। इस संबंध में 'दि इकॉनॉमिस्ट' के संपादक वाल्टर बेगहॉट के नाम का विशेष रूप से उल्लेख किया जा सकता है, जिसने 'लोम्बार्ड स्ट्रीट' में वित्तीय संकट के समय केंद्रीय बैंक की महत्वपूर्ण भूमिका को रेखांकित करते हुए अंतिम ऋणदाता के रूप में केंद्रीय बैंक के आधुनिक विचार को निश्चित रूप देने में अहम भूमिका निभाई।

उसने इस बात पर बल दिया कि अन्य सम्पन्न लेकिन अस्थाई तौर पर नकदी की कमी वाले बैंकों को ऋण की उपलब्धता के संबंध में केंद्रीय बैंक की उपस्थिति अनिवार्य है।

केंद्रीय बैंकिंग की उक्त अवधारणा तथा इस संबंध में बैंक ऑफ इंग्लैंड द्वारा निभाई जाने वाली सशक्त भूमिका ने, अन्य देशों का ध्यान भी आकर्षित किया तथा फ्रांस और जर्मनी जैसे देशों सहित अधिकांश देशों ने अपने यहां विभिन्न नामों से केंद्रीय बैंक स्थापित करना शुरू किया। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया जा चुका है, आज भारत सहित सभी देशों की बैंकिंग और वित्तीय प्रणाली में केंद्रीय बैंक निर्विवाद रूप से अत्यधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। समय के साथ-साथ इनके कार्यों में विविधता आती गई है। पर, सभी देशों के केंद्रीय बैंकों द्वारा कुछ आधारभूत काम अवश्य किए जाते हैं। आइये, हम केंद्रीय बैंक के स्वरूप, कार्य और कार्यपद्धति पर एक नजर डाले।

केंद्रीय बैंकिंग-परिभाषा

केंद्रीय बैंकिंग की कुछ परिभाषाएं निम्नानुसार हैं:

'केंद्रीय बैंक एक ऐसी संस्था होती है जो किसी देश की मौद्रिक प्रणाली पर निगरानी रखती है। केंद्रीय बैंक के बहुत से उत्तरदायित्व होते हैं जिनमें मौद्रिक स्थिरता, मुद्रास्फीति को कम करना, पूर्ण रोज़गार जैसे विशिष्ट लक्ष्यों की ओर बढ़ना आदि शामिल हैं। केंद्रीय बैंक सामान्यतः मुद्रा जारी करने, सरकार के बैंकर की भूमिका निभाने, ऋण प्रणाली का विनियमन करने, वाणिज्यिक बैंकों का पर्यवेक्षण करने, विदेशी मुद्रा की आरक्षित निधियों का प्रबंधन करने तथा अंतिम ऋणदाता के रूप में भी कार्य करता है।' *(इनवेस्टमेंट डिक्शनरी)*

'केंद्रीय बैंक किसी देश का मुख्य मौद्रिक प्राधिकारी होता है जो सामान्यतः मुद्रा जारी करने, मौद्रिक नीति बनाने और उसे लागू करने, सदस्य बैंकों की जमाराशियां रखने तथा देश के बैंकिंग उद्योग को सुविधाएं प्रदान करने का काम करता है।' *(investorwords.com)*

'केंद्रीय बैंक एक ऐसी स्वशासी अथवा अर्ध-स्वशासी संस्था होती है जिसे सरकार द्वारा कुछ महत्वपूर्ण मौद्रिक कार्य करने के लिए प्राधिकृत किया जाता है। इन कार्यों में शामिल है - देश की मुद्रा जारी करना, उसका प्रबंधन करना तथा उसका मूल्य बनाये रखना, मुद्रा आपूर्ति को विनियमित करना, वाणिज्यिक बैंकों के परिचालनों का पर्यवेक्षण करना, बैंकों के बैंक के रूप में कार्य करना तथा अंतिम ऋणदाता की भूमिका निभाना। *(businessdictionary.com)*

'केंद्रीय बैंक, रिज़र्व बैंक या मौद्रिक प्राधिकारी किसी देश की मौद्रिक नीति के लिए जिम्मेदार संस्था होती है। यह एक ऐसा बैंक होता है जो आवश्यकता पड़ने पर अन्य बैंकों को राशि उधार देता है। इसका प्राथमिक उत्तरदायित्व देश की मुद्रा तथा मुद्रा आपूर्ति में स्थिरता बनाए रखना है। लेकिन, अन्य कारगर उत्तरदायित्वों में ऋणों की ब्याज दरों पर नियंत्रण रखना तथा वित्तीय संकट के समय बैंकिंग क्षेत्र को अंतिम ऋणदाता के तौर पर धन उपलब्ध कराना शामिल है। इसके पास यह सुनिश्चित करने की दृष्टि से पर्यवेक्षण की शक्तियां भी होती हैं कि बैंक और अन्य वित्तीय संस्थाएं लापरवाही अथवा धोखाधड़ीपूर्ण व्यवहार न करें।' *(wikipedia.org)*

उपर्युक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट है कि केंद्रीय बैंक किसी देश की सरकार द्वारा प्राधिकृत ऐसी स्वशासी या अर्ध-स्वशासी संस्था है, जो मुख्यतः निम्नलिखित दायित्व निभाती है:

* मुद्रा जारी करना
* मौद्रिक स्थिरता कायम रखना
* मौद्रिक नीति बनाना और उसे लागू करना
* सरकार के बैंकर के रूप में कार्य करना
* बैंकों के बैंक के रूप में कार्य करना
* ऋण प्रणाली का विनियमन करना
* वाणिज्यिक बैंकों के परिचालन का पर्यवेक्षण और निगरानी
* विदेशी मुद्रा की आरक्षित निधियों का रखरखाव

* बैंकिंग उद्योग को बेहतर कार्यनिष्पादन के लिए सुविधाएं प्रदान करना

अधिकांश देशों में केंद्रीय बैंक को स्वशासी संस्था के तौर पर अपनाया जाता है ताकि वह राजनीतिक हस्तक्षेप के बिना अपना कार्य प्रभावी तरीके से कर सके। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, मौद्रिक नीति का कार्यान्वयन करने, देश की समस्त मुद्रा आपूर्ति पर नियंत्रण रखने, बैंकिंग उद्योग का विनियमन करने और उसका पर्यवेक्षण करने, देश की करेंसी का अंतर्राष्ट्रीय मूल्य स्थिर रखने जैसे महत्वपूर्ण कार्यों को अंजाम देने के लिए यह आवश्यक ही नहीं, बल्कि अनिवार्य भी है कि केंद्रीय बैंक के परिचालन को राजनीतिक हस्तक्षेप से दूर रखा जाए। लेकिन व्यवहार में केंद्रीय बैंक की पूर्ण स्वायत्तता संभव नहीं हो पाती क्योंकि सरकार की प्राथमिकताओं के अनुसार उसे नीतियां बनाने के लिए अक्सर बाध्य होना पड़ता है।

केंद्रीय बैंक सामान्यतः सरकार, बैंकों तथा वित्तीय संस्थाओं को ब्याज पर ऋण देकर तथा सरकार के बैंकर के रूप में सेवाएं प्रदान करके आय अर्जित करते हैं। अधिकांश देशों में केंद्रीय बैंक सरकार के स्वामित्व वाली संस्था होती है क्योंकि उनकी अधिकृत/चुकता पूंजी सरकार द्वारा प्रदत्त होती है। अतः केंद्रीय बैंक जो लाभ कमाते हैं, वे अपनी-अपनी सरकारों को लाभांश के तौर पर अंतरित कर देते हैं।

अब हम संक्षेप में यह देखने का प्रयास करेंगे कि केंद्रीय बैंक अपने उपर्युक्त महत्वपूर्ण उत्तरदायित्वों को निभाने के लिए क्या करता है।

मुद्रा जारी करना

केंद्रीय बैंक सरकार के परामर्श से यह तय करता है कि देश की मुद्रा का रूप क्या होगा। पहले मुद्रा कुछ निर्धारित राशि में बहुमूल्य धातुओं जैसे सोना/चांदी के लिए मुद्रा के विनिमय के वचन के रूप में जारी की जाती थी। अब जबकि अधिकांश देशों में कागजी मुद्रा का चलन है, मुद्रा (नोट) पर ''भुगतान का जो वचन'' दिया जाता है, वह उस पर अंकित मूल्य की उसी मुद्रा में अदायगी के वचन के अलावा और कुछ नहीं होता।

केंद्रीय बैंक इसी अर्थ में 'बैंक' होते हैं कि वे विदेशी मुद्रा, स्वर्ण तथा अन्य वित्तीय आस्तियों के रूप में परिसंपत्तियों के धारक होते हैं और बकाया मुद्रा (संचलन में मुद्रा) के रूप में देयताओं के भी वाहक होते हैं। बैंक की प्राथमिक देयता अर्थात बकाया मुद्रा बैंक के स्वामित्व वाली उक्त आस्तियों के बल पर जारी की जाती है ताकि अपनी देयता चुकाने के लिए जरूरत पड़ने पर बैंक उन आस्तियों का उपयोग कर सके।

ब्याज दर तय करना

अधिकांश देशों में केंद्रीय बैंक अल्पकालीन ब्याज दरें तय करते हैं ताकि बैंकों के जमाकर्ता ग्राहकों को उचित ब्याज मिल सके तथा बैंकों के ऋणकर्ता ग्राहकों को उचित ब्याज पर ऋण मिल सके। अक्सर इसके लिए अधिकतम और न्यूनतम ब्याज दरें तय की जाती हैं ताकि उन सीमाओं के भीतर वाणिज्य बैंक अपने जमाकर्ता ग्राहकों को ब्याज दे सकें और ऋणकर्ता ग्राहकों को ऋण उपलब्ध करा सकें। विभिन्न प्रयोजनों के लिए जमा और ऋण पर ब्याज दरों को भिन्न रखा जा सकता है।

सामान्यतः यह माना जाता है कि सभी ब्याज दरों और मुद्रा दरों पर केंद्रीय बैंक का नियंत्रण रहता है। लेकिन, आर्थिक सिद्धांत इस बात को मानता है और इसके पर्याप्त प्रमाण भी हैं कि एक खुली अर्थव्यवस्था में किसी भी केंद्रीय बैंक के लिए सभी ब्याज दरों को एक साथ नियंत्रित करना संभव नहीं है। ऐसा इसलिए क्योंकि केंद्रीय बैंक निजी व्यक्तियों तथा कंपनियों द्वारा अदा किए जाने वाले वास्तविक ब्याज को प्रभावित करने की सीमित क्षमता ही रखता है। वास्तविक ब्याज निर्धारण ऐसी कई अन्य बातों पर भी निर्भर होता है जो केंद्रीय बैंक के नियंत्रण में नहीं होतीं। केंद्रीय बैंक केवल उन ब्याज दरों को प्रभावित कर सकता है जिनके संबंध में लेनदेन बैंकों के माध्यम से होता है।

मौद्रिक नीति बनाना और लागू करना

किसी भी केंद्रीय बैंक का यह मुख्य उत्तरदायित्व है कि वह

अपनी मुद्रा के आंतरिक और बाह्य मूल्य को स्थिरता प्रदान करे। इसके लिए मुद्रास्फीति को नियंत्रित करना तथा ऋण प्रणाली को विनियमित करना आवश्यक है। इस महत्वपूर्ण कार्य को संपादित करने के लिए सक्षम बनाने हेतु केंद्रीय बैंक को संबंधित अधिनियम/ अधिनियमों के अंतर्गत कई अधिकार और शक्तियां प्रदान की जाती हैं। ये अधिकार और शक्तियां ऋण तथा मौद्रिक नीति के उपायों के रूप में केंद्रीय बैंक को उपलब्ध होती हैं। ये निम्नलिखित हैं:-

बैंक दर निर्धारण

किसी देश का केंद्रीय बैंक जिस दर पर सरकारों, बैंकों और वित्तीय संस्थाओं को उधार देता है या उनके प्रथम श्रेणी बिलों की भुनाई/पुनर्भुनाई करता है, वह ब्याज दर न कहला कर बैंक दर कहलाती है। इस दर को मौद्रिक और ऋण के एक उपाय के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। इस दर को बढाने से बैंक द्वारा केंद्रीय बैंक से लिया जाने वाला उधार महंगा हो जाता है। परिणामस्वरूप वे कम उधार लेते हैं। साथ ही, चूंकि वे अधिक ब्याज पर केंद्रीय बैंक से उधार लेते हैं अतः उसे उससे अधिक दर पर अपने ग्राहकों को उधार देते हैं। परिणामस्वरूप, अपेक्षाकृत अधिक ब्याज दर होने से ग्राहक भी कम ऋण लेते हैं। प्रत्यक्षतः यह नीति तब अपनाई जाती है जब केंद्रीय बैंक, बैंकों के माध्यम से कम उधार देने और इस प्रकार अर्थव्यवस्था में मुद्रा की मात्रा कम करने की नीति अपनाता है। यदि वह बैंकों के माध्यम से अधिक ऋण देने और अर्थव्यवस्था में मुद्रा की मात्रा बढ़ाने की नीति अपनाता है तो बैंक दर को घटा देता है ताकि बैंक उससे कम दर पर ज्यादा उधार लेने के लिए प्रेरित हों। बैंक भी पहले से सस्ती दर पर अपने ग्राहकों को उधार दे सकेंगे और वे अधिक उधार लेने के लिए तैयार होंगे, इस प्रकार अर्थव्यस्था में अतिरिक्त धन पहुंच सकेगा।

अल्पकालीन उधार दरों का निर्धारण

बैंक दर को मौद्रिक नीति के एक उपाय के रूप में प्रयोग करने के अलावा, केंद्रीय बैंक ऐसी अल्पकालीन ब्याज दरों को भी मौद्रिक नीति के उपाय के तौर पर प्रयुक्त करते हैं जिनसे बैंकों और वित्तीय संस्थाओं की अल्पकालीन निधियां प्रभावित होती हैं। उदाहरण के लिए, रिपो दर को लिया जा सकता है। बैंकों / वित्तीय संस्थाओं को अल्पकालीन उधार देने के लिए केंद्रीय बैंक जो ब्याज दर वसूल करता है, वह रिपो दर कहलाती है, इस दर को घटा या बढ़ा कर केंद्रीय बैंक उधार लेने वाले बैंकों की उधार-मांग में वृद्धि या कमी ला सकता है। इस दर को घटाने पर बैंक उससे अधिक अल्पकालीन उधार लेंगे और अपने ग्राहकों को अधिक उधार देंगे। दूसरी ओर, अगर यह दर बढ़ा दी जाती है, तो बैंक कम उधार लेंगे, साथ ही, उनके ग्राहकों को भी महंगी दर से ऋण मिलेगा, अतः वे भी अधिक ऋण लेने के प्रति हतोत्साहित होंगे।

केंद्रीय बैंक द्वारा विभिन्न प्रकार की अल्पकालीन उधार दरों में परिवर्तन से स्टॉक तथा बांड बाज़ार में खरीद बेच भी प्रभावित होती है और बंधक तथा ब्याज दरें भी प्रभावित होती हैं। इसका कारण यह है कि इस हेतु बैंकों के माध्यम से उधार पर उपलब्ध राशि की मात्रा तथा उस पर लिये जाने वाले ब्याज की दर में भी परिवर्तन हो जाता है। बाज़ारों को प्रभावित करने के लिए मौद्रिक उपाय के रूप में विभिन्न देशों में केंद्रीय बैंक जिन दरों का इस्तेमाल करते हैं। वे निम्नानुसार हैं:-

(i) **सीमांत उधार दर-** यह दर केंद्रीय बैंक से उधार लेने वाली संस्थाओं के लिए एक निश्चित दर होती है। अमेरिका में इसे बट्टा दर के नाम से जाना जाता है।

(ii) **पुनर्वित्त दर-** इसे न्यूनतम बोली दर (मिनिमम बिड रेट) के नाम से जाना जाता है और यह पुनर्वित्त ऋणों के लिए आधार दर का काम करती है। अमेरिका में इसे फेडरल फंड रेट के नाम से जाना जाता है।

(iii) **जमा दर-** वह ब्याज दर जो बैंक द्वारा केंद्रीय बैंक के पास अपना धन जमा करने पर प्राप्त होती है। भारत में इसे रिवर्स रिपो के नाम से जाना जाता है।

केंद्रीय बैंक द्वारा उक्त दरों में परिवर्तन से मुद्रा बाज़ार अर्थात अल्पकालीन ऋणों के बाज़ार में प्रचलित ब्याज दरों में भी तदनुरूपी परिवर्तन आता है।

आरक्षित निधि अपेक्षाएं

अधिकांश देशों में केंद्रीय बैंक को यह अधिकार दिया जाता है कि वह बैंकों की निवल मांग और मीयादी देयताओं का कुछ भाग (प्रतिशत) आरक्षित निधि के तौर पर रखना तय करे। आवश्यकतानुसार इन अपेक्षाओं में घट-बढ़ की जा सकती है। कानूनी तौर पर इस प्रकार निधियों के आरक्षण की शुरुआत 19 वीं शताब्दी में की गई थी ताकि बैंकों की ऋण-निर्माण (क्रेडिट क्रिएशन) की क्षमता को सीमित किया जा सके और अनावश्यक मुद्रा आपूर्ति पर नियंत्रण किया जा सके।

भारत सहित कई देशों में इस हेतु निम्न आरक्षित निधियां निर्धारित किए जाने और उनमें यथावश्यक परिवर्तन करने का अधिकार केंद्रीय बैंक को दिया गया है:-

आरक्षित नकदी निधि अनुपात

इसे आरक्षित नकदी निधि अपेक्षाएं भी कहा जाता है। इसके अंतर्गत प्रत्येक बैंक से यह अपेक्षा की जाती है कि वह केंद्रीय बैंक द्वारा निर्धारित प्रतिशत के अनुसार अपनी निवल मांग और मीयादी देयताओं का एक भाग केंद्रीय बैंक के पास जमाराशियों के रूप में रखे।

सांविधिक चलनिधि अनुपात

इसमें प्रत्येक बैंक से यह अपेक्षा की जाती है कि वह केंद्रीय बैंक द्वारा निर्धारित किए गये प्रतिशत के अनुसार अपनी मांग और मीयादी देयताओं का एक भाग ऐसी आस्तियों के रूप में रखे जिन्हें आवश्यकता पड़ने पर तत्काल नकदी के रूप में परिवर्तित किया जा सके। इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए बैंक स्वर्ण/चांदी आदि में निवेश करते हैं या फिर सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश करते हैं।

केंद्रीय बैंक संबंधित अधिनियम/अधिनियमों द्वारा उसे प्रदत्त शक्तियों और सीमाओं के भीतर उक्त दोनों अनुपातों में कमी या वृद्धि कर सकता है। अतः केंद्रीय बैंकों द्वारा इन्हें मौद्रिक नीति के उपाय अर्थात बैंकों द्वारा दिये जाने वाले ऋण की मात्रा में कमी या वृद्धि करके अर्थव्यवस्था में मुद्रा की आपूर्ति घटाने या बढ़ाने के एक उपाय के रूप में प्रयुक्त कर लिया जाता है। इन अनुपातों में वृद्धि करने पर बैंकों के पास उधार के लिए निधियां पहले से कम रह जाएंगी और क्रेडिट क्रिएशन कम होगा। दूसरी ओर, इनमें कमी करने से बैंकों के पास उधार देने के लिए अतिरिक्त निधियां उपलब्ध हो जाएंगी, वे अधिक उधार दे सकेंगे और अधिक ऋण-निर्माण या क्रेडिट क्रिएशन कर सकेंगे।

पूंजी अपेक्षाएं

सभी बैंकों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे अपनी आस्तियों का कुछ प्रतिशत पूंजी के रूप में अपने पास रखें। यह प्रतिशत केंद्रीय बैंक द्वारा निर्धारित किया जाता है। अंतरराष्ट्रीय बैंकों के लिए, जिनमें बैंक ऑफ इंटरनेशनल सेटिलमेंट के सदस्य केंद्रीय बैंक शामिल हैं, पूंजी पर्याप्तता हेतु बैंकों की आस्तियों का एक निर्धारित प्रतिशत पूंजी के रूप में रखना आवश्यक है। यह बैंकों की ऋण आस्तियों को आवश्यकता से अधिक बढ़ने से रोकने का एक उपाय है और बैंकों की स्थिति को सुदृढ़ बनाने का माध्यम भी। बैंकों की असीमित उधार क्षमता पर रोक लगाने की दृष्टि से पूंजी पर्याप्तता संबंधी अपेक्षाओं को जमा/आरक्षित निधि अनुपात (सीआरआर/एसएलआर) की अपेक्षा अधिक कारगर माना जाता है क्योंकि कोई बैंक तब तक और ऋण नहीं दे सकता जब तक कि उसने अपने तुलन-पत्र में इस हेतु अतिरिक्त पूंजी का प्रावधान न कर लिया हो।

विदेशी मुद्रा संबंधी अपेक्षाएं

सभी देशों में केंद्रीय बैंक विदेशी मुद्रा संबंधी लेनदेनों पर निगरानी रखते हैं। इस संबंध में वे विदेशी मुद्रा के डीलर, जो अधिकांशतः बैंक होते हैं, के लिए विदेशी मुद्रा संबंधी कुछ अपेक्षाएं निर्धारित करते हैं तथा उनके तत्संबंधी कार्यकलापों का पर्यवेक्षण करते हैं।

विदेशी मुद्रा संबंधी अपेक्षाओं का निर्धारण देश में मुद्रा की आपूर्ति को प्रभावित करने के लिए भी किया जाता है। कुछ केंद्रीय बैंक यह अपेक्षा कर सकते हैं कि निर्यातों आदि से प्राप्त

होने वाली कुछ अथवा समस्त विदेशी मुद्रा को स्थानीय मुद्रा में (देश की मुद्रा में) अनिवार्य रूप से परिवर्तित किया जाए। जिस विनिमय दर पर विदेशी मुद्रा के बदले स्थानीय मुद्रा खरीदी जाती है वह या तो बाज़ार-आधारित होती है या फिर केंद्रीय बैंक द्वारा निर्णायक तौर पर तय की जाती है।

मुद्रा आपूर्ति को प्रभावित करने के लिए इस उपाय का सहारा सामान्यतः उन देशों द्वारा लिया जाता है जिनकी मुद्रा अपरिवर्तनीय (नॉन कन्वर्टिबल) या आंशिक रूप से परिवर्तनीय (पार्शियली कन्वर्टिबल) होती है। स्थानीय मुद्रा के प्राप्तकर्ता को उसका किसी भी रूप में इस्तेमाल करने या उसे कुछ समय के लिए केंद्रीय बैंक के पास जमा कराने अथवा कुछ प्रतिबंधों के अधीन उपयोग करने की इजाजत दी जाती है। इन विकल्पों में से किस विकल्प का उपयोग किया जाएगा यह केंद्रीय बैंक के विवेक पर निर्भर होता है जो विकल्प चुनते समय इस बात को विचार में लेता है कि मुद्रा की आपूर्ति को कितना और किस रूप में प्रभावित करना है।

इस पद्धति में केंद्रीय बैंक द्वारा मुद्रा की आपूर्ति को बढ़ाने की दृष्टि से स्थानीय मुद्रा देकर डीलरों आदि से विदेशी मुद्रा खरीदी जाती है। इस प्रकार विदेशी मुद्रा केंद्रीय बैंक के पास आ जाती है और स्थानीय मुद्रा डीलरों के पास पहुंच जाती है। जब स्थानीय मुद्रा की मात्रा को कम करना होता है तो केंद्रीय बैंक विविध उपायों के जरिए ऐसा कर सकता है जिनमें बांड बेचना या विदेशी मुद्रा के लेनदेन में सीधा हस्तक्षेप करना शामिल है।

मार्जिन संबंधी अपेक्षाएं और अन्य उपाय

कुछ देशों में केंद्रीय बैंक उपर्युक्त उपायों के अलावा कुछ अन्य ऐसे उपाय भी अपनाते हैं जो बैंकों द्वारा दिये जाने वाले उधारों को परोक्ष रूप से सीमित करते हैं और अन्यथा रूप से पूंजी बाज़ार को नियंत्रित या विनियमित करते हैं। उदाहरण के लिए केंद्रीय बैंक उधार पर मार्जिन को घटा या बढ़ा सकता है। मार्जिन संबंधी अपेक्षा व्यक्तियों या कंपनियों आदि द्वारा लिये जाने वाले उधारों के संबंध में जमानतों के मूल्य का एक न्यूनतम प्रतिशत होता है। इसे बढ़ाने से उधार ली जाने वाली राशियों में कमी आती है और इसे घटाने से उधार ली जाने वाली राशियों की मात्रा बढ़ती है। इसका सीधा सा कारण यह है कि जब मार्जिन के रूप में कुल उधार राशि के अनुपात के तौर पर अधिक मूल्य की जमानत दी जानी होती है, तो लोग कम उधार लेंगे और जब मार्जिन अनुपात कम होगा तो अधिक लोग उधार लेने के लिए प्रेरित होंगे।

केंद्रीय बैंक/बैंकों/वित्तीय संस्थाओं द्वारा धारित आस्तियों की गुणवत्ता के संबंध में भी कुछ अपेक्षाएं निर्धारित कर सकते हैं। ये अपेक्षाएं वित्तीय प्रणाली द्वारा सृजित लीवरेज तथा जोखिम की मात्रा को सीमित करने का कार्य करती हैं,जैसे किसी आस्ति के लिए न्यूनतम साख निर्धारण श्रेणी की आवश्यकता लगाना या फिर परोक्ष भी हो सकती है, जैसे यह अपेक्षा लगाना कि प्रतिपक्षियों को उधार तभी दिया जाएगा जब उसके लिए विशिष्ट गुणवत्ता वाली जमानत संपार्श्विक के रूप में प्रस्तुत की जाएगी।

भारत में चयनात्मक ऋण नियंत्रण के अंतर्गत रिज़र्व बैंक मार्जिन संबंधी अपेक्षाएं तय करता है। ये मार्जिन किसी विशेष वस्तु, क्षेत्र अथवा संस्था के लिए अलग-अलग हो सकते हैं उदाहरण के लिए, यदि केंद्रीय बैंक इस बात की आवश्यकता महसूस करता है कि किसी वस्तु विशेष या क्षेत्र या संस्था विशेष को बैंकों द्वारा अधिक उधार नहीं दिया जाना चाहिए तो उसके लिए मार्जिन अपेक्षाओं को बढ़ा दिया जाएगा। इसके विपरीत, यदि उन्हें अधिक उधार दिये जाने की नीति हो तो उनके लिए मार्जिन आवश्यकताओं को घटा दिया जाएगा।

अन्य देशों में भी मार्जिन संबंधी अपेक्षाओं को ऋण नीति के एक कारगर उपाय के तौर पर अपनाया जाता रहा है। उदाहरण के लिए पीपल्स बैंक ऑफ चाइना (चीन का केंद्रीय बैंक) ने वर्ष 2003 में कुछ उद्योगों को ऋण देने पर प्रतिबंध लगाया था तथा ग्रामीण बैंकों की तुलना में शहरी बैंकों से 1 प्रतिशत अधिक आरक्षित निधियां बनाए रखने के लिए कहा था।

खुले बाजार के कार्यकलाप

मुद्रा की आपूर्ति बढ़ाने या घटाने की दृष्टि से केंद्रीय बैंकों द्वारा जो एक अन्य कारगर उपाय अपनाया जाता है उसे खुले

बाजार के कार्यकलापों (ओपन मार्केट ऑपरेशंस) के नाम से जाना जाता है। इसमें खुले बाजार में सरकारी प्रतिभूतियों या बांडों की केंद्रीय बैंक द्वारा खरीद-बेच की जाती है। यदि मुद्रा की आपूर्ति कम करनी हो तो केंद्रीय बैंक प्रतिभूतियां/बांड आदि बेचता है ताकि उनके विक्रय से प्राप्त राशि को अपने पास रोक कर रखा जा सके और उतनी राशि एक तरह से संचलन से बाहर की जा सके। इसके विपरीत यदि नीति मुद्रा आपूर्ति को बढ़ाने की हो तो केंद्रीय बैंक प्रतिभूतियों/बांडों की खरीद करता है जिससे केंद्रीय बैंक के पास से उतनी राशि बाहर आती है और वह संचलन मुद्रा की मात्रा में वृद्धि करती है। इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि खुले बाज़ार के कार्यकलापों द्वारा कोई केंद्रीय बैंक अर्थव्यवस्था में मुद्रा की आपूर्ति को सीधे प्रभावित कर सकता है। जब भी वह प्रतिभूतियां खरीदता है तब प्रतिभूतियों के बदले धन देता है जो अर्थव्यवस्था में मुद्रा की मात्रा को बढ़ाता है और जब भी प्रतिभूतियां बेचता है तो अर्थव्यवस्था में से मुद्रा की मात्रा कम करता है, यदि देखा जाए तो प्रतिभूतियों की खरीद करना जहां उस प्रतिभूति की पूर्ति को घटाता है, वहीं अर्थव्यवस्था में नई मुद्रा डालने जैसा कार्य करता है। खुले बाज़ार के मुख्य कार्यकलाप हैं-

* संपार्श्विक जमानतों के बदले बैंकों/वित्तीय संस्थाओं को केंद्रीय बैंक द्वारा अल्पकाल के लिए अस्थायी तौर पर उधार देना। इसे पुनर्खरीद विकल्प (रिपर्चेज आप्शंस या रिपो) के नाम से जाना जाता है। इस प्रकार के कार्यकलाप नियमित तौर पर किए जाते हैं और ये अल्प परिपक्वता अवधि वाले उधार होते हैं, जिनकी अवधि एक सप्ताह से लेकर एक माह तक की हो सकती है।

* केंद्रीय बैंक द्वारा तदर्थ आधार पर प्रतिभूतियों का क्रय-विक्रय

* फोरेक्स स्वैप जैसे विदेशी मुद्रा संबंधी परिचालन

बैंकिंग पर्यवेक्षण और अन्य गतिविधियां

हर देश में केंद्रीय बैंक का यह महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व है कि वह बैंकिंग प्रणाली के सुचारु संचालन की दृष्टि से बैंकों के कार्यकलापों पर निगरानी रखे और उनका पर्यवेक्षण करे। इस हेतु केंद्रीय बैंक द्वारा कार्यस्थल पर जाकर बैंकों का निरीक्षण किया जाता है तथा विवरणियों के माध्यम से परोक्ष निगरानी भी की जाती है। बैंकों पर नियंत्रण तथा निगरानी करने के लिए विभिन्न देशों के केंद्रीय बैंकों द्वारा विभिन्न व्यवस्था की जाती है। उदाहरण के लिए

यू के में बैंकिंग पर्यवेक्षण का कार्य यू के ट्रेजरी जैसे सरकारी विभाग अथवा वित्तीय सेवा प्राधिकरण (फाइनेंशियल सर्विस अथोरिटी) जैसी स्वतंत्र सरकारी एजेंसी द्वारा किया जाता है। ये बैंक के तुलन पत्र की जांच करते हैं तथा ग्राहकों के प्रति बैंक के रवैये और नीतियों की भी समीक्षा करते हैं।

अमेरिका जैसे कई देशों में बैंकिंग क्षेत्र पर निगरानी रखने के लिए विभिन्न प्रयोजनों हेतु विभिन्न एजेंसियों को पर्यवेक्षण का काम सौंपा जाता है। इन एजेंसियों के बीच सामान्यतः काफी सहयोग रहता है। उदाहरण के लिए, मनी सेंटर बैंक, जमा स्वीकारने वाले बैंक तथा अन्य प्रकार की वित्तीय संस्थाएं और अलग-अलग एजेंसियां उनका पर्यवेक्षण करें। कुछ प्रकार के बैंकिंग विनियमन राज्य अथवा प्रांतीय सरकारों को भी प्रत्यायोजित किए जाते हैं।

भारत सहित अधिकांश देशों में केंद्रीय बैंक स्वयं (अपने विभिन्न विभागों/कार्यालयों के जरिये) बैंकों पर निगरानी और नियंत्रण का कार्य करते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि किसी भी देश की बैंकिंग प्रणाली ही नहीं बल्कि अर्थव्यवस्था में भी केंद्रीय बैंक बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। वह देश की मुद्रा व्यवस्था का तो प्रबंधन और परिचालन करता ही है, मौद्रिक नीति के जरिये मुद्रास्फीति को नियंत्रित करता है, देश की मुद्रा के आंतरिक और बाह्य मूल्य की स्थिरता सुनिश्चित करता है। बैंकिंग प्रणाली को देश की प्राथमिकताओं के अनुसार दिशा देता है तथा यह सुनिश्चित करता है कि बैंक लापरवाही से और धोखाधड़ीपूर्ण तरीके से काम न करें ताकि ग्राहकों के और पूरी बैंकिंग प्रणाली के हितों की रक्षा की जा सके।

भारत में बासल -II का मूल्यांकन

● निधि चौधरी
प्रबंधक, भारतीय रिज़र्व बैंक
कोलकाता

'उन्नीसवीं सदी में बैंकिंग जोखिम-ग्रस्त उद्यम है'

-नोबल विजेता मार्टन मिलर

आज हम उन्नीसवीं सदी के जोखिमों को काफी पीछे छोड़ वैश्वीकरण और वित्तीय नवोन्मेष के युग वाली इक्कीसवीं सदी में प्रवेश कर चुके हैं जिसमें बैंकिंग संस्थान नित नए उत्पादों और सेवाओं के साथ भौगोलिक एवं राजनीतिक बाधाओं को पार कर अपना व्यापार न केवल पड़ोसी देशों, अपितु विभिन्न महाद्वीपों में फैलाने की कोशिश कर रहे हैं। इसलिए बैंकिंग के लिए इक्कीसवीं सदी के जोखिम भी अत्यंत जटिल एवं व्यापक हो गए हैं। यह सत्य है कि सभी प्रकार के व्यवसाय में 'जोखिम नहीं तो लाभ नहीं' का नियम लागू होता है किन्तु बैंकिंग किसी भी अर्थव्यवस्था में सर्वाधिक जोखिम से भरा व्यवसाय है क्योंकि इसमें जनता का धन दांव पर लगा होता है और यह अत्यधिक लीवरेज्ड है। इसी कारण जोखिम प्रबंधन बैंकिंग से अपरिहार्य रूप से जुड़ा है क्योंकि हिस्सेदारों के हितों की सुरक्षा करना अनिवार्य है। दुनिया भर में बैंकों को अभिशासित करने वाली जोखिम प्रबंधन नीतियों में व्यापक अंतर पाया जाता है, जो बैंकिंग संस्थाओं के वैश्वीकरण में एक गंभीर बाधा सिद्ध हुआ है। समान स्तरीय नीति-नियमों के अभाव में अंतर्देशीय एवं अंतरबैंक तुलना करना कठिन हो जाता है।

> यह समझौता बैंकों में जोखिम प्रबंधन को मजबूत बनाने में सक्षम है। इसमें बैंकों के दैनंदिन संचालन में आने वाले सभी प्रकार के जोखिमों के अनुरूप पूंजी पर्याप्तता एवं जोखिम प्रभार निर्धारण के लिए विभिन्न अवधारणाएं बतलाई गई हैं जिनके आधार पर बैंक अपने जोखिमों का आकलन कर सकते हैं एवं पर्यवेक्षक यह निर्धारित कर सकते हैं कि बैंक द्वारा किया गया जोखिम का आकलन एवं उसके लिए आबंटित पूंजी पर्याप्त है अथवा नहीं।

इसी स्थिति का विवेचन करने के लिए वर्ष 1974 के अंत में बैंक फॉर इन्टरनेशनल सेटलमेंट, जो स्विट्जरलैंड के बासल शहर में स्थित है, ने जी-10 समूह के केंद्रीय बैंकों के गवर्नरों की सदस्यता वाली बैंक पर्यवेक्षण की बासल समिति की स्थापना की। इस समिति ने अंतरराष्ट्रीय रूप से सक्रिय बैंकों के लिए जोखिम प्रबंधन एवं पर्यवेक्षण से संबंधित बैंकिंग नीतियों में एकरूपता लाने के लिए जो समझौता किया, वही बासल समझौता कहलाता है। बासल समिति ने सर्वप्रथम वर्ष 1988 में कुछ दिशानिर्देश जारी किए जिसे बासल प्रथम के नाम से जाना गया। यह पहली बार था जब यह अनुभव किया गया कि किसी भी बैंक को एक न्यूनतम पूंजी रखनी चाहिए जो बैंक को विभिन्न प्रकार के जोखिमों से होने वाले नुकसान का सामना करने में सक्षम बना सके तथा विभिन्न प्रकार की आस्तियों के लिए भिन्न-भिन्न जोखिम प्रभार होने चाहिए। तत्पश्चात वर्ष 2004 में बासल समिति ने एक नया समझौता बासल-II जारी किया। बासल समिति का यह विचार है कि यह समझौता बैंकों में जोखिम प्रबंधन को मजबूत बनाने में सक्षम है। इसमें बैंकों के दैनंदिन संचालन में आने वाले सभी प्रकार के जोखिमों के अनुरूप पूंजी पर्याप्तता एवं जोखिम प्रभार निर्धारण के लिए विभिन्न अवधारणाएं बतलाई गई हैं जिनके आधार पर बैंक अपने जोखिमों का आकलन कर सकते हैं एवं पर्यवेक्षक यह निर्धारित कर सकते हैं कि बैंक द्वारा किया गया जोखिम का आकलन एवं उसके लिए आबंटित पूंजी पर्याप्त है अथवा नहीं। साथ ही यह बैंक की वित्तीय रिपोर्टिंग में पारदर्शिता लाकर बाज़ार अनुशासन को भी बढ़ावा देता है।

भारतीय रिज़र्व बैंक का बासल समिति से संबंध वर्ष 1997 में प्रारंभ हुआ जब भारत बासल समिति के उन 16 गैर सदस्य देशों में शामिल हुआ जिनके परामर्श से बासल के मूल सिद्धांत तैयार किए गए। रिज़र्व बैंक 1998 में गठित हुए मूल सिद्धांत संपर्क समूह (Core Principles Liaison Group) तथा बाद में पूंजी पर मूल सिद्धांत तय करने के लिए गठित कार्यदल (Core Principles Working Group on Capital) का भी सदस्य था।

रिज़र्व बैंक ने 6 देशों के केंद्रीय बैंकों की सदस्यता वाले समूह की अध्यक्षता करते हुए बासल-II के लिए सरलीकृत अवधारणा का प्रस्ताव भी प्रस्तुत किया। इसीलिए भारतीय बैंकिंग को अधिक समुत्थानशील बनाकर सर्वोत्तम अन्तरराष्ट्रीय प्रतिबद्धताओं के साथ पंक्तिबद्ध करने के लिए रिज़र्व बैंक ने नब्बे के दशक में बासल-I को अपनाया तब भी आय निर्धारण, आस्ति वर्गीकरण एवं प्रावधानीकरण आदि से संबंधित विवेकपूर्ण मानदंडों के संबंध में भारतीय बैंकों को कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था किन्तु अंततः भारतीय बैंकों ने बासल-I को सफलतापूर्वक लागू कर दिखाया। अब भारतीय रिज़र्व बैंक ने देशी बैंकों के लिए बासल-II को लागू कर दिया है। रिज़र्व बैंक ने सर्वप्रथम बासल-II को लागू करने हेतु 31 मार्च 2007 तक की समय सीमा रखी थी।

प्रारम्भिक विरोध के बावजूद बासल प्रतिमानों की वैश्वीकरण के युग में उपयोगिता अब सभी की समझ में आने लगी है और अधिकांश भारतीय बैंकों द्वारा इन्हें स्वीकृति मिलने लगी है।

बासल-II और भारतीय बैंकिंग के लिए अवसर

बासल-II के संशोधित प्रतिमान के तहत भारतीय बैंकों में नए पूंजी पर्याप्तता ढांचे का संशोधित स्वरूप, पर्यवेक्षी समीक्षा प्रक्रिया पर दिशानिर्देश तथा विनियामक पूंजी के भाग के रूप में अधिमानी शेयरों का निर्गम शामिल है। यद्यपि अभी भी बासल-II के तहत परिष्कृत पद्धतियों को अपनाने के लिए कोई समय सीमा निर्धारित नहीं की गई है और लगभग सभी मायनों में सरलीकृत अवधारणाओं को अपनाने की अनुमति दी गई है। बासल-II की उन्नत अवधारणाओं को अपनाने से पूर्व बैंकों को पर्यवेक्षकों के समक्ष यह साबित करना होगा कि वे बासल मानदंडों के अनुकूल कार्य करने में सक्षम हैं। बासल-II के जोखिम प्रबंधन, पूंजी प्रबंधन आदि पर पड़ने वाले सकारात्मक प्रभाव को अग्रलिखित बिन्दुओं में स्पष्ट किया गया है-

* बासल समझौता एक अत्यन्त ही लचीला एवं अनुकूल समझौता है। यह कोई कठोर न्यूनतम मानदंड विहित नहीं करता है, अपितु नीति परिभाषित करने के लिए व्यापक सिद्धांत और दिशा-निर्देश निर्धारित करता है, जिन्हें प्रत्येक राष्ट्र अपनी अपेक्षाओं और प्राथमिकताओं के अनुकूल अपना सकते हैं।

* इन अनुशंसाओं के पीछे कोई कानूनन बाध्यता नहीं होने के बावजूद अधिकांश देशों के केंद्रीय बैंकों ने इसका स्वागत किया है और अपने बैंकों को बासल प्रतिमान अपनाने के लिए प्रेरित किया है।

* बासल समझौता अपनाने से पूर्व भारतीय रिज़र्व बैंक और भारतीय बैंक संघ की संयुक्त सदस्यता वाली स्टीयरिंग समिति वर्ष 2005 में स्थापित की गई थी जिसने बासल सिद्धांतों की भारत में बैंकिंग प्रणाली के विकास एवं प्रगति के लिए उपयोगिता देखकर ही बासल-II को अपनाने की घोषणा की है।

* बासल-II समझौता बैंकिंग उद्यम में सुरक्षा और सुदृढ़ता लाने का एक समग्र स्वरूप है क्योंकि यह पर्यवेक्षीय पूंजीगत आवश्यकताओं को बैंक के जोखिम प्रकटीकरण से जोड़ता है, पर्यवेक्षकों एवं बाज़ार विश्लेषकों को पूंजी पर्याप्तता परिमापन में सक्षम बनाता है और बैंकिंग संगठनों को जोखिम मापन एवं प्रबंधन में सुधार हेतु प्रोत्साहित करता है।

* नीतिगत उपायों द्वारा बासल-II का अनुपालन बैंकों को अंतरराष्ट्रीय वित्तीय पटल पर अपना स्थान बनाने के लिए जरूरी है। अंतरराष्ट्रीय बाज़ार में कदम रखने से पूर्व बैंकों को एक समग्र जोखिम प्रबंधन प्रणाली अपनानी होगी ताकि वे निशिदिन बदलते आर्थिक माहौल एवं प्रतिस्पर्धा के कड़े दौर में अपनी उपस्थिति वैश्विक बाजार में दर्ज करा सकें।

* बासल-II सिद्धान्त मुख्य रूप से अंतरराष्ट्रीय स्तर पर व्यावसायिक स्थिति रखने वाले बैंकों के लिए जारी किए गए हैं और अधिकांश भारतीय बैंकों का अंतरराष्ट्रीय बाज़ार में अधिक कारोबार नहीं है । किन्तु फिर भी वर्ष 2003 में ही भारत के सबसे बड़े वाणिज्य बैंक भारतीय स्टेट बैंक ने बासल-II की अनुपालना करने की घोषणा कर दी थी जबकि उस समय भारतीय स्टेट बैंक की अंतरराष्ट्रीय परिचालनों

से होने वाली आय केवल 6% थी और भारतीय रिज़र्व बैंक के अनुसार केवल उन्हीं बैंकों को बासल-II अपनाना होगा जिनका अंतरराष्ट्रीय बाज़ार में 20% व्यवसाय हो। यह सही है कि भारतीय बैंकों में से अधिकांश की अंतरराष्ट्रीय बाज़ार में मौजूदगी नहीं है किन्तु भावी लक्ष्यों के मद्देनजर बासल-II को अपनाने में की जाने वाली देरी भारतीय बैंकों को अंतरराष्ट्रीय बैंकों की तुलना में कार्यात्मक योग्यता एवं प्रतिस्पर्धात्मक क्षमता में पीछे छोड़ सकती है। स्पष्ट है कि यह समझौता वित्तीय एवं जोखिम प्रबंधन को उत्तम कोटि का बनाने के लिए जरूरी मानदंड निर्धारित करता है, जो सभी प्रकार के बैंकों के लिए लाभप्रद है।

* बासल समझौता अपनाने वाले देशों में पर्यवेक्षक अपने-अपने देश की अर्थव्यवस्था के अनुकूल विभिन्न आस्तियों के लिए भिन्न-भिन्न जोखिम निर्धारित कर सकते हैं। हमारे देश में रिज़र्व बैंक ने नीचे दी गई तालिका के अनुसार जोखिम प्रभार निर्धारित किए हैं :

तालिकाः जोखिम प्रभार हेतु भारतीय रिज़र्व बैंक के दिशानिर्देश

मूडीज रेटिंग	आई सी आर ए	जोखिम प्रभार (%)
AAA to AA	LAAA	20
A	LAA	50
BAA to BA	LA	100
B	LBBB and below	150
Unrated	Unrated	100

स्रोत : आईसीआरए, 2005

* भारतीय रिज़र्व बैंक के पूंजी पर्याप्तता संबंधी दिशानिर्देश अल्पावधि वाले रेटेड ऋणों के लिए कम जोखिम प्रभार की व्यवस्था करते हैं जैसे कि वाणिज्यिक पत्र जो अधिकांशतः तालिका के अनुसार सबसे अच्छी रेटिंग के साथ केवल 20 प्रतिशत का जोखिम प्रभार आकर्षित करते हैं। इस प्रकार वाणिज्यिक पत्रों में निवेश से बैंक अधिक लाभान्वित हो सकते हैं।

* खुदरा व्यवसाय के मामले में बासल-I के 125 प्रतिशत के स्थान पर नया बासल समझौता 75 प्रतिशत का जोखिम प्रभार निर्धारित करता है जिससे भारतीय बैंकों में क्रेडिट कार्ड व्यवसाय एवं अन्य निजी ऋण को बढ़ावा देने की बैंकों की प्रवृत्ति और तीव्र हो सकती है।

* बासल-I की तुलना में बासल-II के अंतर्गत भारतीय रिज़र्व बैंक को भारतीय परिस्थितियों के अनुकूल जोखिम प्रभार निर्धारित करने होंगे ताकि बैंक आने वाले समय में रेटेड कारपोरेट कंपनियों को दिए जाने वाले ऋणों का हिस्सा बढ़ाकर अपने पोर्टफोलियो में जोखिम को संतुलित कर सकें।

* बासल-II के प्रथम स्तंभ के तहत भारतीय रिज़र्व बैंक ने अपेक्षित डाटा को निर्मित करने, जोखिम मॉडलों को विकसित करने और उनकी बाद में जाँच-पड़ताल करने में बैंकों के सामने उपस्थित मानव संसाधन और सूचना प्रौद्योगिकी की मूलभूत संरचना की चुनौतियों एवं पर्यवेक्षकों के लिए भी मॉडलों को वैधीकृत करने और अनुमोदन की प्रक्रिया संचालित करने में उत्पन्न चुनौतियों का ध्यान रखते हुए इस बात को वरीयता दी कि भारत में बैंकों द्वारा प्रारंभ में सरल दृष्टिकोणों का कार्यान्वयन किया जाए। उन्नत दृष्टिकोणों का विकल्प देने के संबंध में भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा यथासमय निर्णय लिया जाएगा।

* बासल-II को लागू करके भारतीय बैंक बृहद रूप से अपने साख-जोखिम प्रभारों को कम करके विनियामकीय पूंजी में कमी ला सकते हैं यदि वे अच्छी रेटिंग वाले कारपोरेट ऋण, खुदरा ऋण तथा अपने ऋणों पर मॉर्टगेज, प्रतिभूति आदि को अपने पोर्टफोलियो में सम्मिलित करें। इससे निश्चित ही बैंकों के ऋण प्रबंधन में परिवर्तन आएगा तथा उनका पोर्टफोलियो भी व्यापक रूप से प्रभावित होगा। यहाँ तक कि यदि बैंक अपने पोर्टफोलियो में परिवर्तन न भी करें

तो भी आईसीआरए (ICRA) के अनुमानों के अनुसार बासल-II को अपनाने से साख जोखिम के लिए विनियामकीय पूंजी में कमी आएगी।

* भारतीय रिज़र्व बैंक ने बैंकों को मानकीकृत दृष्टिकोण अपनाकर जोखिम के लिए पूंजीगत अपेक्षाओं की गणना करने का निर्देश दिया है जिससे ऋण जोखिम का मापन पहले की अपेक्षा अधिक सार्थक होने लगा है, क्योंकि इसमें गारंटी, डेरिवेटिव तथा अन्य जोखिम शामकों के प्रभाव को पूंजी प्रभार के आकलन में शामिल किया जाता है। स्पष्ट है कि यह व्यवस्था बैंकों को क्रेडिट पोर्टफोलियो जोखिम के संबंध में जोखिम शामकों के प्रयोग के लिए प्रोत्साहित करती है।

भारत में बैंक अपने आंतरिक जोखिम प्रबंधन मॉडलों को विकसित करने के संबंध में अभी नवजात स्थिति में हैं, यह निर्णय लिया गया कि शुरुआती तौर पर बैंक बाज़ार जोखिम के मापन के लिए मानकीकृत मापन पद्धति को अपनाएं।

* यह मानते हुए कि भारत में बैंक अपने आंतरिक जोखिम प्रबंधन मॉडलों को विकसित करने के संबंध में अभी नवजात स्थिति में हैं, यह निर्णय लिया गया कि शुरुआती तौर पर बैंक बाज़ार जोखिम के मापन के लिए मानकीकृत मापन पद्धति को अपनाएं। पूंजीगत विनियमों का आंतरिक मॉडल ढांचा बैंकों को बाज़ार जोखिम के उनके आंतरिक मॉडल के परिशुद्धता को सुधारने के लिए प्रोत्साहित करता है। बैंकों द्वारा की गई प्रगति के आधार पर उन्हें उन्नत दृष्टिकोण अपनाने की अनुमति दी जा सकती है।

* परिचालन जोखिम जो कि बासल-II के तहत पहली बार जोखिम प्रबंधन का अंग बनाई गई है, के लिए बैंकों को अतिरिक्त विनियामकीय पूंजी की व्यवस्था करनी होगी। भारत में, बैंकों को सूचित किया गया है कि वे परिचालन जोखिम के लिए पूंजीगत प्रभार का आकलन करने हेतु मूलभूत संकेतक दृष्टिकोण (Basic Indicator Approach) को अपनाएं। तथापि उन्हें अधिक परिष्कृत परिचालन जोखिम मापन प्रणालियों को विकसित करने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा। मूलभूत संकेतक दृष्टिकोण के तहत बैंकों को पिछले तीन वर्ष में हुई सकल सकारात्मक वार्षिक आय के औसत का 15% परिचालन जोखिम के पूंजी प्रभार के रूप में रखना होगा। इसका अभिप्राय यह भी है कि यदि बासल-II अपनाने पर बैंकों को अधिक पूंजी की आवश्यकता होती है तो उसके लिए उन्हें बैंक के बाहर से पूंजी बाज़ार अथवा सरकार से पूंजी लेनी होगी। स्पष्ट है कि बासल-II को अपनाने से भारतीय बैंकों के विलय एवं अधिग्रहण द्वारा उनके सुदृढ़ीकरण और उनमें विदेशी बैंकों की साझेदारी बढ़ने की संभावनाएं अपरिहार्य हैं।

* बासल-II के द्वितीय स्तंभ 'पर्यवेक्षी समीक्षा प्रक्रिया' के तहत बैंकों को विनियामकीय पूंजी के अतिरिक्त एवं उससे ऊपर सभी प्रकार की जोखिमों का सामना करने के लिए एक न्यूनतम पूंजी कुशन रखना होगा। इसके तहत उन जोखिमों के लिए पूंजी प्रभार रखने की अपेक्षा बैंकों से की जाती है जिन्हें प्रथम स्तंभ के तहत नहीं रखा गया है जैसे तरलता जोखिम, ब्याज दर जोखिम, रणनीतिक जोखिम, व्यापार जोखिम इत्यादि। यह न सिर्फ बैंकों को जोखिमों का सामना करने के लिए तैयार करता है वरन् पर्यवेक्षकों को भी पूंजी पर्याप्तता के अनुमान जानने में सक्षम बनाता है। अब जबकि बासल-II के मूल तत्व प्रयोग में लाए जा रहे हैं बैंकों और पर्यवेक्षकों के लिए यह जरूरी है कि वे बासल -II के अंतर्गत उन्नत दृष्टिकोणों को अपनाने के लिए क्षमताओं का निर्माण कर लें।

* बासल-II के द्वितीय स्तंभ के तहत भारतीय रिज़र्व बैंक ने जोखिम आधारित पर्यवेक्षण को लागू कर दिया है जिसमें बारह विविध जोखिमों के आधार पर बैंकों के जोखिम ढांचे का मूल्यांकन किया जाता है। पहले जहां बैंक निरीक्षण केवल क्रेडिट पर केंद्रित हुआ करता था वहीं बासल मानदंडों को देश में लागू करने हेतु अब रिज़र्व बैंक द्वारा किया जाने वाला बैंक निरीक्षण जोखिम आधारित होने लगा है।

* बासल के तृतीय स्तंभ 'बाज़ार अनुशासन' के अंतर्गत बैंकों को नए जोखिम आधारित पूंजी अनुपातों, साख गुणवत्ता, पोर्टफोलियो प्रबंधन, जोखिम मापन एवं प्रबंधन से जुड़ी सभी जानकारियां सही स्वरूप में प्रदान करनी होंगी। इस तरह बैंक की विविध प्रकार की गतिविधियों, उनमें विद्यमान जोखिम एवं उसके मापन-प्रबंधन के बारे में जानकारी प्रदान करने से बैंक वित्तीय बाज़ारों के प्रति अधिक पारदर्शिता अपनाते हैं जो अंततः बाज़ार अनुशासन को बढ़ावा देती है।

* वर्तमान वैश्विक वित्तीय संकट वित्तीय कारोबार में पारदर्शिता, लेखा अनुशासन, कम प्रकटीकरण इत्यादि का ही नतीजा था। अतएव बासल-II के तृतीय स्तंभ को सही मायनों में लागू करने से बाज़ार में वित्तीय संस्थाओं के बारे में निवेशकों को सही जानकारी का ज्ञान होगा जो बाज़ार के सुदृढ़ीकरण के लिए नितांत आवश्यक है।

बैंकों द्वारा रखी जाने वाली विनियामकीय पूंजी उनके खाते में मौजूदा अशोध्य ऋण (Bad Debts) अथवा अनर्जक आस्तियों (NPAs) पर भी निर्भर करेगी। पिछले कुछ वर्षों में सभी वाणिज्य बैंकों ने बासल सिद्धांतों की अनुपालना हेतु अपने एनपीए काफी सीमा तक घटाए हैं और कुल ऋणों में एनपीए का प्रतिशत वर्ष 1993 में 23.2 से घटकर मार्च 2004 में 7.8 रह गया है।

वस्तुतः बासल समझौता बैंकिंग प्रणाली में सर्वोत्तम वैश्विक मानदंडों के अनुरूप निष्पादन क्षमता एवं स्थायित्व लाने के लिए अपनाई जा रही भारतीय रिज़र्व बैंक की दोहरी नीति का ही एक अंग है। भारतीय रिज़र्व बैंक एक ओर भारतीय बैंकिंग में विलय एवं अधिग्रहण द्वारा सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र के बैंकों को मजबूत बनाने तथा दूसरी ओर विदेशी बैंकों में एक रणनीतिक तरीके से नियमित वृद्धि करने को प्रोत्साहित कर रहा है।

यह नीति भारतीय बैंकिंग जगत में गहन प्रतिस्पर्धा उत्पन्न कर बैंक ग्राहकों को अच्छी सेवाओं एवं उत्पादों का विकल्प देने में कामयाब होगी।

बासल-II का आलोचनात्मक विवेचन

संभवतया आलोचकों का यह मत कि बासल-II समझौता औद्योगिक रूप से समृद्ध जी-10 देशों के मद्देनज़र बनाया गया है जहां साख का इष्टतम दोहन किया जा चुका है वहीं भारत जैसे विकासशील देशों में जहां आज भी अधिकांश जनता वित्तीय क्षेत्र की परिधि से बाहर है बासल समझौता एक अप्रभावी कदम साबित हो सकता है। इन सबके अतिरिक्त कुछ अन्य समस्याएं हैं, जो बासल-II को अपनाने से पूर्व ध्यान में रखनी चाहिए वे हैं:-

बासल-II का अनुपालन करने के लिए व्यापक सूचना संग्रहण एवं सूचना विश्लेषण जरूरी है। कई बैंक बासल अनुपालन से होने वाले लाभों को न्यून मानते हैं क्योंकि उनकी अंतरराष्ट्रीय बाज़ार में स्थिति नगण्य है।

विद्यमान दिशानिर्देशों के अनुसार बासल-II को केवल अनुसूचित वाणिज्य बैंकों पर लागू किया गया है और अन्य वित्तीय क्षेत्र जैसे, बीमा, प्रतिभूति इत्यादि इससे अछूते हैं। स्पष्ट है कि वित्तीय तंत्र के अंतर्गत केवल बैंकिंग पर ही बासल का प्रभाव होगा तथा यह स्थिति पर्यवेक्षण के मामले में वित्तीय क्षेत्र में दुविधा पैदा कर सकती है।

यह भी आशंका है कि बैंकिंग संस्थाएं बासल-II प्रतिमानों को लागू करने पर परिचालन जोखिम के लिए जरूरी अतिरिक्त पूंजी प्रभार की वसूली ग्राहकों पर दिन प्रतिदिन की बैंकिंग गतिविधियों के लिए अधिक मूल्य लगाकर करें। इसके कारण उत्पन्न स्थिति ग्राहकों को अधिक जोखिम वाले बैंकों से उत्पाद एवं सेवाएं खरीदने के लिए प्रोत्साहित कर सकती है।

विकसित देशों में अल्पावधि एवं दीर्घावधि ऋण के लिए जोखिम प्रभार भिन्न-भिन्न होता है। जबकि भारतीय बैंकों का पोर्टफोलियो मुख्यतः कम अवधि वाले ऋण जैसे वाणिज्यिक पत्र (Commercial Papers) अथवा ग्राहकों को दी जाने वाली वित्तीय सुविधाओं जैसे कैश क्रेडिट अथवा ओवरड्राफ्ट, जो केवल तकनीकी दृष्टि में ऋण हैं, से मिलकर बना है जिनके लिए भिन्न-भिन्न जोखिम प्रभार का निर्धारण करने के लिए बैंकों एवं

पर्यवेक्षकों को विशिष्ट योग्यताएं विकसित करनी होंगी।

* चूंकि भारतीय बैंकों का ऋण एवं अग्रिम पोर्टफोलियो अधिकांशतः अनरेटेड संस्थाओं के लिए होता है अतएव बासल-II के अंतर्गत लागू होने वाले कम जोखिम प्रभार का विशेष असर भारतीय बैंकों पर नहीं पड़ेगा।

* आईसीआरए के अनुमानों के अनुसार भारतीय बैंकों को परिचालन जोखिम के लिए पूंजी प्रभार हेतु अतिरिक्त 12000 करोड़ रुपये की आवश्यकता पड़ेगी। इसमें से अधिकांश पूंजी सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के लिए 9000 करोड़, तत्पश्चात नए निजी बैंकों के लिए 1100 करोड़ तथा पुराने निजी बैंकों के लिए 750 करोड़ रुपये की आवश्यकता होगी। यह पूंजी बैंकों द्वारा ईक्विटी के माध्यम से जुटायी जा रही है जो बैंकों में संरचनात्मक परिवर्तन ला सकती है। पहले ही भारतीय बैंकों में विदेशी पूंजी निवेश को दी गई स्वीकृति बैंकों के पूंजी आधार को परिवर्तित कर रही है।

बासल-II के अनुपालन के लिए आवश्यक पूंजी प्रदान करने के लिए भारत सरकार ने बैंकों में विदेशी पूंजी निवेश को स्वीकृति दे दी है। जिसका नतीजा यह है कि दिसंबर 2005 में ICICI बैंक में विदेशी संस्थागत निवेश लगभग 49% तक था वहीं HDFC के मामले में यह 69% तक पहुंच गया। ऐसी स्थिति में उदार विदेशी प्रत्यक्ष निवेश नीति से बड़े अंतरराष्ट्रीय बैंकों द्वारा भारतीय बैंकों के अधिग्रहण की संभावनाओं का डर है।

* भारत जैसे देश में बैंकों में सार्वजनिक सर्वाधिकार जनता के मन में जो सम्मान एवं विश्वास पैदा करता है उसकी तुलना किसी भी प्रकार की पूंजी से नहीं की जा सकती है। यही कारण है कि भारत में बैंकों के राष्ट्रीयकरण के पश्चात से कोई सार्वजनिक बैंक असफल नहीं हुआ है। वहीं बीयरिंग्स बैंक का अच्छा-खासा पूंजी आधार उसे बुरी तरह असफल होने से नहीं बचा पाया था जो बासल सिद्धांतों की मूल अवधारणा कि पूंजी जोखिमों से बचाने में सक्षम है को झूठा साबित करती है।

बासल संस्थान द्वारा कराए गए QIS-5 के अनुसार जी-10 देशों के बैंकों में जोखिम प्रबंधन तंत्र उत्तम है जबकि आर्थिक मंदी में जिस तरह वहां के बैंकों की दुर्दशा हुई वह बासल-II के समूचे अस्तित्व पर ही सवाल उठाती है। यही वजह है कि फेडरल रिज़र्व ने बासल-II को लागू करने पर रोक लगा दी है क्योंकि यह अमरीकी बैंकों में न्यूनतम पूंजी स्तर को वर्तमान स्तर से घटा सकता है। स्पष्ट है कि वैश्विक आर्थिक संकट ने यह संशय अधिकांश बैंकिंग जगत में पैदा कर दिया है कि बासल-II को लागू करना अंतरराष्ट्रीय आर्थिक तंत्र को मजबूत करेगा अथवा कमजोर।

* कुछ आलोचकों का मानना है कि बासल-II को लागू करने के लिए केवल आधारभूत अवधारणाओं को अपनाकर भारतीय रिज़र्व बैंक ने काफी अपरिपक्व एवं पुरातनपंथी दृष्टिकोण अपनाया है। क्योंकि यह आवश्यक नहीं कि जो जी-10 देशों के लिए सही हो वह भारत जैसे विकासशील देश के लिए भी ठीक हो। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि बासल-II की अवधारणाओं को अपनाने की तकनीकी एवं मानव संसाधनात्मक क्षमता हमारे बैंकों में नहीं है और इन्हें अपनाने से न केवल बैंकों बल्कि पर्यवेक्षकों के लिए भी अत्यधिक कठिनाई उत्पन्न हो सकती है।

भारतीय बैंकिंग के संदर्भ में एक विशेष बात यह है कि यहां अधिकांश ऋण (Loan) अनरेटेड हैं जिनके लिए जोखिम प्रभार ऊपर दी गई तालिका के अनुसार 100% का होगा अर्थात् जोखिम भारित परिसंपत्ति की तुलना में पूंजी अनुपात (CRAR) के 9% होने की स्थिति में प्रत्येक 100 रुपए के ऋण पर बैंकों को 9 रुपए जोखिम प्रभार के रूप में रखने होंगे। यह स्थिति बैंकों में ऋण पर लगने वाले प्रभार बढ़ा सकती है जिसे अंततः ग्राहकों को उठाना होगा।

छोटे और मध्यम स्तर के उद्यमों की रेटिंग के लिए एसएमई रेटिंग एजेंसी (SMERA) का गठन किया गया है किन्तु वास्तविक संदर्भ में इसकी रेटिंग को व्यवहार्यता प्राप्त नहीं हुई है जिससे इन उद्यमों में बैंकों के निवेश की उनके ऋण पोर्टफोलियो से तुलना करना कठिन हो जाता है।

* बासल-II के अंतर्गत विभिन्न प्रकार की आस्तियों के लिए जोखिम का निर्धारण रेटिंग कंपनियों द्वारा दी गई रेटिंग के आधार पर होता है। किंतु भारत में रेटिंग एजेन्सी की मूल्यांकन प्रविधियां अभी भी शैशवावस्था में हैं जिससे बासल-II के अंतर्गत जोखिम प्रबंधन किस हद तक तथ्यसंगत होगा कहना मुश्किल है। जिस तरह वैश्विक वित्तीय संकट में दुनिया की नामी-गिरामी रेटिंग एजेंसियों द्वारा अच्छी रेटिंग दिए जाने के बावजूद विकसित देशों के बैंकों को भारी नुकसान उठाना पड़ा वह रेटिंग की समस्त प्रक्रिया पर ही सवाल उठाती है।

* भारतीय बैंकों के समक्ष बासल-II की तैयारी में सूचना प्रौद्योगिकी अवसंरचना, डाटा प्रबंधन, जोखिम प्रबंधन संसाधन, भारी निवेश, संचार साधनों आदि का सफलतापूर्वक संचालन जरूरी है।

* जोखिम विविधीकरण का सिद्धांत बैंकों की देनदारी में कई मायनों में लागू नहीं होता है विशेषकर भारत जैसे देश में जहां कृषि, प्राथमिकता क्षेत्र इत्यादि में ऋण आदि देना बैंकों के लिए अनिवार्य होता है। साथ ही, ईक्विटी निवेश तथा रोजगार निर्माण कार्यक्रम आदि से जुड़ी हमारी चिंताएं विकसित देशों में नहीं हैं। हम यह नहीं भूल सकते कि भारत एक जनकल्याणकारी राष्ट्र है जिसमें गरीब किसानों पर सिर्फ इसीलिए ऊंची ब्याज दर नहीं लगाई जा सकती क्योंकि उनके पास अच्छी रेटिंग नहीं है।

सार रूप में हम यह कह सकते हैं कि वैचारिक धरातल पर बासल-II बैंकों और वित्तीय संस्थाओं द्वारा आंतरिक प्रयास के माध्यम से वित्तीय बाज़ारों को समृद्ध एवं पुष्ट करने का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए सुसंगत दृष्टिकोण निर्धारित करता है। इस प्रयोजनार्थ बासल-II न केवल पालन की जाने वाली क्रियाविधि प्रदान करता है, अपितु इसमें निष्पादक संस्थाओं के लिए अल्प पूंजीगत अपेक्षाओं के रूप में आवश्यक प्रोत्साहन की भी व्यवस्था करता है। बासल समझौता बैंकों को निष्पादन के सही उपायों के साथ-साथ पर्यवेक्षणीय दिशा-निर्देशों के एकीकरण के प्रति एक जटिल कदम है। इन जटिलताओं के अतिरिक्त भारतीय बैंकों के सामने एक बड़ी चुनौती यही है कि वे अपने मौजूदा सूचना तंत्र एवं प्रौद्योगिकी तथा मानव संसाधन के साथ बासल-II के अनुकूल उन्नत दृष्टिकोणों को अपनाने के लिए क्षमताओं का निर्माण करें। बासल-II के कारण बैंकों को अपना पूंजी आधार बढ़ाना होगा और जोखिम प्रबंधन के लिए न्यूनतम पूंजी निर्धारित करनी होगी। ऋण जोखिम एवं बाज़ार जोखिम के अतिरिक्त परिचालन जोखिम के लिए भी बैंकों को पूंजी प्रबंधन करना होगा। इस प्रकार भारतीय बैंकों के लिए न्यूनतम पूंजी आवश्यकताएं बढ़ गई हैं और आवश्यक स्तर तक पूंजी को बनाए रखना तथा अत्याधुनिक वित्तीय अवधारणाओं से अपने कार्मिकों एवं तंत्र को सुसज्जित करना बैंकिंग तंत्र के लिए एक व्यावहारिक चुनौती बनकर उभरा है। किंतु बासल प्रतिमानों का सुव्यवस्थित संचालन निश्चित ही भारतीय बैंकों में जोखिम प्रबंधन संस्कृति को सुदृढ़ बनाएगा और उनकी अंतरराष्ट्रीय स्थिति को मजबूत करेगा।

♦

पर्यवेक्षण अनुपालन का एक सोपान है

सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005

● परवेज़ अख्तर
सहायक महाप्रबंधक (विधि)
सिडबी, लखनऊ

सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 लोक प्राधिकारियों के कार्य में पारदर्शिता और उत्तरदायित्व को कायम रखने के लिए अधिनियमित किया गया है। यह अधिनियम नागरिकों को किसी लोक प्राधिकारी के पास उपलब्ध या नियंत्रणाधीन सूचना तक पहुंच का अधिकार देता है एवं साथ ही नागरिकों को निम्न अधिकार भी देता है (क) कार्य, दस्तावेज़ों, अभिलेखों का निरीक्षण; (ख) दस्तावेज़ों या अभिलेखों के नोट, सार या प्रमाणित प्रतियां लेना (ग) सामग्री के सत्यापित नमूने लेना; (घ) डिस्क, फ्लॉपी, टेप, वीडियो कैसेट या किसी अन्य इलेक्ट्रॉनिक रूप में अथवा प्रिंटआउट के माध्यम से सूचना प्राप्त करना, जहां ऐसी सूचना कम्प्यूटर या किसी अन्य साधन में रखी गई हो। इस अधिनियम में प्रत्येक लोक प्राधिकारी का यह कर्तव्य भी निर्धारित किया गया है कि वह इंटरनेट सहित, संचार के विविध साधनों के माध्यम से, जनता को नियमित अंतराल पर ऐसी सूचना स्वतः ही उपलब्ध कराने के लिए सतत प्रयास करे ताकि सूचना प्राप्त करने हेतु नागरिकों को इस अधिनियम का कम से कम उपयोग करना पड़े। आइये संक्षेप में देखते हैं कि सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 के मुख्य प्रावधान क्या हैं व इस अधिनियम के अंतर्गत सूचना किस प्रकार प्राप्त की जा सकती है।

सूचना कौन मांग सकता है और सूचना के अधिकार का क्या अर्थ है?

सूचना का अधिकार अधिनियम,2005 के अंतर्गत प्रदत्त अधिकार भारत के नागरिकों, अर्थात नैसर्गिक व्यक्तियों, को ही उपलब्ध है। तथापि केंद्रीय सूचना आयोग ने अभी हाल ही के अपने निर्णयों में यह प्रावधान किया है कि यद्यपि सूचना का अधिकार अधिनियम के अंतर्गत सूचना केवल नैसर्गिक व्यक्तियों को ही उपलब्ध कराने का प्रावधान है, फिर भी यदि सूचना किसी विधिक व्यक्ति जैसे कि कम्पनी, फर्म आदि द्वारा मांगी जाती है तो वह प्रदान की जा सकती है ताकि वे इस अधिनियम के लाभकारी प्रावधानों से वंचित न रहें। धारा 2 (जे) के प्रावधानों के अनुसार 'अधिकार' में ये अधिकार शामिल हैं - कार्यों, दस्तावेज़ों, अभिलेखों का निरीक्षण, दस्तावेज़ों या अभिलेखों के नोट, सार अथवा प्रमाणित प्रतियां लेना, सामग्री के सत्यापित नमूने लेना, प्रिंटआउट, डिस्क, फ्लॉपी, टेप, वीडियो कैसेट के रूप में या अन्य किसी इलेक्ट्रॉनिक रूप से या प्रिंटआउट के माध्यम से सूचना प्राप्त करना। साथ ही, अधिनियम में 'अभिलेख' शब्द की परिभाषा दी गई है जिसमें शामिल हैं (क) कोई दस्तावेज़, पांडुलिपि व फाइल; (ख) कोई माइक्रोफिल्म, माइक्रोफिश और दस्तावेज़ की फैक्सीमिल प्रति; (ग) ऐसी माइक्रोफिल्म (दीर्घीकृत हो या नहीं) में दिए गए चित्र अथवा चित्रों की प्रतिकृति लेना एवं (घ) कंप्यूटर या किसी अन्य यंत्र से सृजित कोई अन्य सामग्री। इस प्रकार, इस अधिनियम में 'लोक प्राधिकारी' के अभिलेखों की एक विस्तृत श्रेणी शामिल है जिन्हें कोई नागरिक इस अधिनियम के अंतर्गत मांग सकता है। तथापि, अधिनियम की धारा 8 और 9 के अंतर्गत कतिपय छूटें प्रदान की गई हैं, जो एक 'लोक प्राधिकारी' द्वारा प्रकट नहीं की जा सकती। यदि किसी नागरिक द्वारा कोई सूचना मांगी गयी है, जो कि उपर्युक्त में से किसी भी श्रेणी के अंतर्गत आती हो, तो उसे देने से इंकार किया जा सकता है। 'लोक प्राधिकारी' उस सूचना को देने से भी इंकार कर सकता है, जो वैयक्तिक प्रकृति की हो और जिसका किसी सार्वजनिक गतिविधि अथवा हित से कोई संबंध नहीं है। इसके अतिरिक्त, अधिनियम की धारा 8(1) (डी), (ई) और (जे) में भी ऐसी सूचना प्रकटन से छूट प्राप्त है, जो वाणिज्यिक विश्वास, व्यापार संबंधी गुप्त जानकारी आदि से संबंधित है और जिनके प्रकटन से 'तृतीय पक्ष' की प्रतिस्पर्धी स्थिति को नुकसान पहुंचेगा। ऐसी सूचना, जो 'लोक प्राधिकारी' को वैश्वासिक नातेदारी में उपलब्ध हो या कोई वैयक्तिक सूचना, जिसका प्रकटन किसी लोक क्रियाकलाप या हित से संबंध नहीं रखता हो या जिसके प्रकटन से किसी व्यक्ति की एकांतता पर अनावश्यक अतिक्रमण होगा,

को भी देने से इंकार किया जा सकता है।

सूचना उपलब्ध कराने की प्रक्रिया

अधिनियम की धारा 6 में यह प्रावधान किया गया है कि कोई नागरिक, जो अधिनियम के अंतर्गत कोर्ट सूचना अभिप्राप्त करने का इच्छुक है, को अंग्रेजी या हिंदी में या जिस क्षेत्र में आवेदन किया जा रहा है, उस क्षेत्र की राजभाषा में लिखित रूप में या इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से निवेदन करना होगा। निवेदन पत्र के साथ केंद्रीय सूचना अधिकारी/केंद्रीय सहायक लोक सूचना अधिकारी अथवा राज्य लोक सूचना अधिकारी/राज्य लोक सहायक सूचना अधिकारी, जैसा भी मामला हो, के नाम निर्धारित शुल्क अदा करना होगा और उसके द्वारा वांछित सूचना के विवरणों का उल्लेख करना होगा। यदि किसी मामले में निवेदन लिखित रूप से नहीं किया जा सकता है, तो केंद्रीय लोक सूचना अधिकारी अथवा राज्य लोक सूचना अधिकारी, जैसा भी मामला हो, मौखिक निवेदन करने वाले व्यक्ति को सभी प्रकार का उचित सहयोग प्रदान करेगा और लिखित रूप में निवेदन-पत्र देने में उसकी मदद करेगा। साथ ही, सूचना हेतु निवेदन करने वाले आवेदक के लिए यह आवश्यक नहीं होगा कि उससे सम्पर्क करने हेतु अनिवार्य जानकारी को छोड़कर, सूचना हेतु निवेदन करने के किसी भी कारण या किसी प्रकार के अन्य वैयक्तिक विवरण का उल्लेख करें। जहाँ केंद्रीय लोक सूचना अधिकारी अथवा राज्य लोक सूचना अधिकारी द्वारा सूचना प्रदान करने का निर्णय किया जा चुका है, वहां उक्त अधिनियम की धारा 7(3) के अंतर्गत सूचना प्रदान करने की लागत के तौर पर निर्धारित शुल्क भी प्रभारित किया जा सकता है। परंतु धारा 6 की उप-धारा (1) तथा धारा 7 की उपधारा (1) और (5) के अंतर्गत निर्दिष्ट कोई भी शुल्क उन व्यक्तियों पर प्रभारित नहीं किया जाएगा, जो सरकार द्वारा यथा निर्धारित गरीबी रेखा के नीचे आते हैं।

अनुरोध का निपटारा

अधिनियम की धारा 7 में यह प्रावधान किया गया है कि धारा 5 की उपधारा (2) के परन्तुक या धारा 6 की उपधारा (3) के परंतुक के अधीन रहते हुए, धारा 6के अधीन अनुरोध प्राप्त होने पर

(i) जहां मांगी गई सूचना 'लोक प्राधिकारी' से संबंधित हो:

इस प्रयोजन हेतु प्राप्त आवेदन-पत्र का निपटान यथाशीघ्र तथा किसी भी दशा में आवेदन-पत्र प्राप्त होने की तारीख से 30 दिन के भीतर सूचना प्रदान करते हुए या फिर धारा 8 व 9 में विनिर्दिष्ट कारणों में से किसी एक कारण से अनुरोध को अस्वीकार करते हुए किया जाएगा। तथापि, जहां मांगी गई सूचना किसी व्यक्ति के जीवन अथवा स्वतंत्रता से संबंधित है, तो उसे अनुरोध प्राप्ति से 48 घंटे के भीतर उपलब्ध कराया जाएगा।

(ii) जहां मांगी गई सूचना किसी अन्य लोक प्राधिकारी से संबंधित हो:

जिन मामलों में सूचना प्राप्त करने हेतु आवेदन किया जाता है परंतु वह सूचना (1) किसी अन्य लोक प्राधिकारी के पास भी उपलब्ध है; अथवा (2) जिसकी विषय वस्तु किसी अन्य लोक प्राधिकारी के कार्यों से ज्यादा संबंधित है, तो ऐसे आवेदनों या उसके ऐसे भाग, जो भी उचित हो, को अन्य लोक प्राधिकारी के पास स्थानांतरित कर दिया जाएगा तथा ऐसे स्थानांतरण की जानकारी आवेदनकर्ता को तुरंत दे दी जाएगी। व्यवहार्यता की दृष्टि से इस प्रकार के स्थानांतरण यथाशीघ्र किए जायें, तथापि, इनमें आवेदन की तारीख से 5 दिन से अधिक समय न लिया जाये।

(iii) जहां मांगी गई सूचना तृतीय पक्ष से संबंधित है या उसके द्वारा दी गई है:

ऐसे मामलों में ऐसे व्यक्ति को आवेदन-पत्र की प्राप्ति से 5 दिनों के भीतर पूर्व सूचना लिखित रूप में देनी होगी और तृतीय पक्ष को आमंत्रित कर उससे लिखित या मौखिक रूप से इस बात की जानकारी प्राप्त करनी होगी कि क्या संबंधित सूचना प्रकट की जानी चाहिए। संबंधित तृतीय पक्ष केंद्रीय लोक सूचना अधिकारी अथवा राज्य लोक सूचना अधिकारी से ऐसी सूचना प्राप्त होने की तारीख से 10 दिनों के भीतर प्रस्तावित प्रकटन के बारे में

अभ्यावेदन दे सकता है। सूचना के प्रकटन के संबंध में निर्णय करते समय व्यक्ति द्वारा दी गई सहमति को ध्यान में रखा जाएगा। उपर्युक्त प्रक्रिया का पालन करने के पश्चात, केंद्रीय लोक सूचना अधिकारी अथवा राज्य लोक सूचना अधिकारी को आवेदन-पत्र की तारीख से 40 दिनों के भीतर सूचना के प्रकटीकरण के संबंध में निर्णय कराना होगा और तृतीय पक्ष को अपना निर्णय लिखित रूप में अवगत कराना होगा, जिसमें इस बात की विशेष रूप से सूचना दी जाएगी कि तृतीय पक्ष तीस दिन के भीतर उक्त निर्णय के विरुद्ध अपीलीय प्राधिकारी के पास अपील करने का हकदार है।

यदि सूचना का अनुरोध अस्वीकार कर दिया जाता है, तो केंद्रीय लोक सूचना अधिकारी अथवा राज्य लोक सूचना अधिकारी अनुरोधकर्ता को (1) ऐसी अस्वीकृति के कारण (2) वह अवधि जिसके भीतर ऐसी अस्वीकृति के विरुद्ध अपील की जा सकती है (अर्थात अस्वीकृति की सूचना प्राप्ति की तिथि से 30 दिन के भीतर और (3) अपील प्राधिकारी के विवरण आदि संसूचित करेगा। इसके अतिरिक्त यदि केंद्रीय लोक सूचना अधिकारी अथवा राज्य लोक सूचना अधिकारी विनिर्दिष्ट अवधि के भीतर सूचना के अनुरोध पर निर्णय देने में विफल रहते हैं तो अधिनियम के प्रयोजनों एवं प्रावधानों के लिए यह माना जाएगा कि उन्होंने सूचना देने से इंकार कर दिया है।

अपील

अधिनियम की धारा 19 में यह निर्धारित है कि (1) यदि किसी व्यक्ति को निर्दिष्ट समय के भीतर निर्णय प्राप्त नहीं होता है अथवा वह केंद्रीय लोक सूचना अधिकारी अथवा राज्य लोक सूचना अधिकारी के किसी निर्णय से अपकृत है, तो वह ऐसी अवधि की समाप्ति अथवा ऐसे निर्णय की प्राप्ति के 30 दिन के भीतर ऐसे अधिकारी को प्रथम अपील कर सकेगा, जो प्रत्येक लोक प्राधिकरण में, यथास्थिति, केंद्रीय लोक सूचना अधिकारी अथवा राज्य लोक सूचना अधिकारी से वरिष्ठ श्रेणी का है। अपीलीय प्राधिकारी को अपील का निपटान अपील प्राप्त होने के 30 दिन के भीतर अथवा अपील दायर होने की तारीख से कुल 45 दिन से अनधिक की विस्तारित अवधि, जिसके कारण लिखित में दर्ज किए जाएं, के भीतर, जैसी स्थिति हो, करना है। अपीलीय प्राधिकारी के निर्णय के विरुद्ध द्वितीय अपील उस तारीख से, जिसमें कि विनिश्चय किया जाना चाहिए था या वास्तव में प्राप्त किया गया था, 90 दिन के भीतर केंद्रीय सूचना आयोग अथवा राज्य सूचना आयोग में की जा सकेगी। केंद्रीय सूचना आयोग अथवा राज्य सूचना आयोग का निर्णय बाध्यकारी होगा। अपने निर्णय में केंद्रीय सूचना आयोग/राज्य सूचना आयोग लोक प्राधिकारी से अपेक्षा कर सकता है कि वह ऐसे कदम उठाए, जो इस अधिनियम के प्रावधानों के अनुपालन के लिए आवश्यक हों।

सूचना का अधिकार अधिनियम का उद्देश्य न केवल प्रत्येक लोक प्राधिकारी की कार्यप्रणाली में पारदर्शिता व उत्तरदायित्व को बढ़ाना है बल्कि नागरिकों को वह सारी सूचनाएं उपलब्ध कराने के लिए एक ऐसा तंत्र स्थापित करना है जिसका कि सीधा संबंध विकास के साथ जुड़ा हुआ है। केंद्र व राज्य सरकारों द्वारा आम नागरिकों के लिए ऐसी बहुत सी कल्याणकारी योजनाएं चलाई जा रही हैं। कार्यप्रणाली में पारदर्शिता आने से निश्चित रूप से उनका लाभ आम नागरिकों को मिलेगा और लोगों में जागरुकता लाने के लिए उपयोगी सिद्ध होगा।

तथापि, यह कहना उपयुक्त होगा कि भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19 में प्रदत्त अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता से संबंधित मूल अधिकार का दायरा बढ़ाते हुए व अनगिनत फायदों के साथ सूचना का अधिकार अधिनियम बनाया गया है जिससे कि सूचना का प्रवाह आम नागरिकों तक हो सके। सूचना प्राप्त करने के नाम पर इस अधिनियम का जो यदा-कदा दुरूपयोग हो रहा है उसके बावजूद इस अधिनियम की उपयोगिता को नकारा नहीं जा सकता। अतः आवश्यकता इस बात की है कि इस अधिनियम के प्रावधानों को सूचना के प्रवाह के लिए या सूचना प्राप्त करने के लिए जिम्मेदारी से इस्तेमाल किया जाए।

सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) का विकास - एक विवेचना

● डॉ. शरद कुमार, निदेशक एवं
पूर्णेन्दु कुमार, सहायक परामर्शदाता
सांख्यिकी और सूचना प्रबंध विभाग
भारतीय रिज़र्व बैंक, मुंबई

परिचय

'राष्ट्रीय आय के आंकड़े, समूची अर्थव्यवस्था और इसमें शामिल जनसंख्या के विभिन्न समूहों-यथा उत्पाद करने वालों और आय प्राप्त करने वालों पर एक व्यापक दृष्टि डालते हैं तथा यदि दीर्घ काल तक ये उपलब्ध हों तो बीते समय देश की अर्थव्यवस्था में आए मूलभूत बदलावों को स्पष्ट करते हैं और आने वाले समय के बारे में पूरा नहीं तो रुझानों का कुछ संकेत देते हैं।' **(राष्ट्रीय आय समिति)**

'National Income Statistics provide a wide view of the country's entire economy, as well as of the various groups in the population who participate as producers and income receivers, and that, if available over a substantial period, they reveal clearly the basic changes in the country's economoy in the past and suggest, if not fully reveal, trends for the future'

National Income Committee (1951)

राष्ट्रीय आय समिति (नेशनल इनकम कमिटी) के अनुसार 'राष्ट्रीय आय किसी दी गई अवधि के दौरान वस्तुओं और सेवाओं की मात्रा का बगैर दोहराव के, आकलन देता है।' इस प्रकार राष्ट्रीय आय का जोड़ किसी अर्थव्यवस्था में वस्तुओं और सेवाओं के प्रवाह (फ्लो) की जानकारी देता है। यह एक फ्लो है स्टॉक नहीं। राष्ट्रीय धन (नेशनल वेल्थ) यह बताता है कि किसी समय विशेष पर किसी देश के पास वस्तुओं का स्टॉक कितना है जबकि राष्ट्रीय आय यह बताती है कि हमारी जरूरतों को पूरा करने के लिए किसी अर्थव्यवस्था में किसी दी गई अवधि में वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन कितना है।

ब्रिटिश काल में राष्ट्रीय आय के कई अनुमान तैयार किए गए। व्यक्तिगत स्तर पर उल्लेखनीय प्रयास इनके थेः दादाभाई नवरोजी (1868), विलियम डिग्बी (1899), फिंडले श्रीरस (1911,1922 और 1931), शाह एंड खंबाता (1921), वी.के.आर.वी. राव (1925-29 और 1931-32) और आर.सी. देसाई (1931-1940)। आजादी के बाद राष्ट्रीय आय के आधिकारिक अनुमान के लिए अगस्त 1949 में राष्ट्रीय आय समिति बनी। इस समिति की रिपोर्ट के आधार पर केंद्रीय सांख्यिकी संगठन (सीएसओ) ने 1948-49 से 1964-65 की अवधि के लिए चालू कीमतों और 1948-49 की कीमतों पर राष्ट्रीय आय का डाटा उपलब्ध कराया। इस सीरीज़ ने अर्थव्यवस्था को 13 क्षेत्रों (सेक्टरों) में बांटा, यथा कृषि, पशुपालन, वानिकी (फॉरेस्ट्री), मछली पालन, खनन और फैक्टरी, लघु उद्यम, संगठित बैंकिंग और इंश्योरेंस, वाणिज्य और परिवहन, विभिन्न पेशे, मुक्त कला और घरेलू सेवा, लोक प्राधिकरण, आवास संपत्ति और शेष विश्व। बाद में सीएसओ ने 1960-61, 1970-71,1980-81,1993-94, 1999-00 की कीमतों पर नेशनल इनकम सीरीज़ प्रकाशित की।

राष्ट्रीय आय किसी देश के समग्र उत्पादन कार्यकलापों का एक सूचक है। उत्पादन का स्तर महत्वपूर्ण है क्योंकि काफी हद तक इससे यह पता चलता है कि देश में खपत/उपभोग की क्षमता क्या है और इसका संबंध रोजगार के स्तर से भी है। व्यक्तिगत और सामूहिक स्तर पर वस्तुओं और सेवाओं की खपत/उपभोग जनता की स्थिति को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारकों में से एक है। इसकी जरूरत योजना और नीति निर्माण में भी पड़ती है।

किसी अर्थव्यवस्था में तैयार वस्तुओं और सेवाओं के वार्षिक प्रवाह के कुल मौद्रिक मूल्य को राष्ट्रीय आय कहते हैं। इसे मापने के तीन तरीके हैंः

☞ **उत्पाद सेः** तैयार वस्तुओं और सेवाओं के वार्षिक प्रवाह का अपने बाज़ार मूल्य पर कुल योग। तैयार वस्तुओं और सेवाओं का मूल्य जानने के लिए इनपुट के रूप में लगाई गई चीजों का

मूल्य आउटपुट से घटाया जाता है। अर्थात् केवल वर्धित मूल्य या उत्पादन के प्रत्येक स्तर पर जितना वैल्यू जुड़ा (Value added) उसी को लिया जाता है। इसे निम्नलिखित समीकरण द्वारा दर्शाया जा सकता है।

वर्धित मूल्य (Value added) = *कुल बिक्री (टोटल सेल्स)+ तैयार (फिनिश्ड) या बन रही/अर्ध निर्मित (सेमी फिनिश्ड) वस्तुओं का अंतिम स्टॉक - कच्चे माल और दूसरे फर्मों से खरीदे गए मध्यवर्ती/सहायक वस्तुओं (इंटरमीडिएट गुडस्) पर कुल खर्च- तैयार (फिनिश्ड) या बन रही/अर्ध निर्मित (सेमी फिनिश्ड) वस्तुओं का प्रारंभिक स्टॉक*

☞ **आय से :** अंतिम आउटपुट के उत्पादन में उत्पादन कारकों जैसे जमीन, श्रम, पूंजी और उद्यमवृत्ति द्वारा अर्जित वार्षिक आय का जोड़।

☞ **व्यय से :** तैयार वस्तुओं और सेवाओं पर तीन प्रमुख सेक्टरों - घरेलू क्षेत्र, व्यवसाय क्षेत्र और सरकारी क्षेत्र -द्वारा किए जाने वाले व्यय के वार्षिक प्रवाह (फ्लो) का जोड़।

सैद्धांतिक रूप से देखा जाए तो तीनों का परिणाम एक ही होना चाहिए क्योंकि वस्तुओं और सेवाओं पर किया गया कुल खर्च उत्पादकों को मिली कुल आय के बराबर होना चाहिए और वह भी वस्तुओं और सेवाओं के आउटपुट के कुल मूल्य के बराबर होना चाहिए।

तथापि व्यवहार में इन तरीकों से प्राप्त परिणामों में कुछ अंतर देखा जाता है। इसके कई कारण हैं जैसे स्टॉक स्तर (इन्वेंटरी लेवल) में बदलाव और सांख्यिकी (स्टैटिस्टिक्स) संकलन में हुई भूल-चूक। इसका कारण यह है कि स्टॉक में वस्तुओं का उत्पादन हो गया है (इसलिए शामिल है), किंतु इसकी बिक्री नहीं हुई है (इसलिए शामिल नहीं है)। इसी प्रकार टाइमिंग के चलते भी उत्पादित वस्तुओं व इन वस्तुओं का उत्पादन करने वाले कारकों को किए गए भुगतान के वैल्यू में कुछ अंतर हो जाता है, विशेषतः तब जबकि इनपुट्स की खरीद क्रेडिट पर हुई हो और इसलिए भी कि कई बार उत्पादन की अवधि के बाद अक्सर वेतन/मजदूरी आदि का लेन-देन होता है।

राष्ट्रीय आय का आकलन

राष्ट्रीय आय को विभिन्न घटक-प्रवाहों का जोड़ कहा जा सकता है। सामान्यतया, ये घटक प्रवाह इंटर-सेक्टोरल लेन-देन को दर्शाते हैं जिनसे आर्थिक प्रणाली के ढांचे का व्यापक तौर पर पता चलता है। सकल आय का सबसे व्यापक आकलन, बाज़ार मूल्य पर सकल राष्ट्रीय उत्पाद (Gross National Product) है। इस संबंध में तीन वैकल्पिक अवधारणाएं हैं:

☞ **सकल और निवल अवधारणाएं (ग्रॉस एंड नेट कॉन्सेप्ट्स):** सकल (ग्रॉस) का प्रयोग वहां किया जाता है जहां पूंजीगत खपत/कैपिटल कन्जम्शन् (मूल्य ह्रास/डेप्रिसिएशन) के लिए कोई व्यवस्था नहीं की जाती है जबकि निवल (नेट) का प्रयोग तब किया जाता है जब डेप्रिसिएशन का प्रावधान हो। अतः सकल योग और तत्संबंधी निवल योग में पूंजी के मूल्यह्रास (डेप्रिसिएशन) का अंतर है।

☞ **राष्ट्रीय और घरेलू (नेशनल एंड डोमेस्टिक) की अवधारणाएं:** 'राष्ट्रीय' का उपयोग वहां होता है जब समुच्चय/योग में देश के सामान्य नागरिकों की सभी प्रकार की आय को शामिल किया जाए चाहे उनके द्वारा प्रदत्त उत्पादन के कारक देश में हों या देश के बाहर। निर्दिष्ट भौगोलिक सीमाओं के भीतर उत्पन्न कुल आउटपुट या आय के लिए घरेलू (डोमेस्टिक) का प्रयोग होता है, भले ही उत्पादन के कारक का स्वामित्व देश के निवासियों के पास हो या अनिवासियों के पास। इसलिए राष्ट्रीय उत्पादन (नेशनल प्रोडेक्ट) और तत्संबंधी नेट प्रोडेक्ट में अंतर बाहर की आय के बराबर है जहां 'नेट' विदेश से आ रहे फैक्टर इनकम के इनफ्लो को तत्संबंधी आउटफ्लो से घटाकर प्राप्त किया जाता है। सकल देशी उत्पाद (ग्रॉस डोमेस्टिक प्रोडेक्ट/जीडीपी) और सकल राष्ट्रीय उत्पाद (ग्रॉस नेशनल प्रोडेक्ट/जीएनपी) में यही अंतर है।

इस प्रकार, किसी अर्थव्यवस्था में तैयार/उत्पादित और आयात की गयी सभी वस्तुओं व सेवाओं के मूल्य के योग तथा इसमें से निर्यात की गयी वस्तुओं व सेवाओं के मूल्य को घटाकर जो प्राप्त

होता है उसको सकल राष्ट्रीय उत्पाद (जीएनपी) कहते हैं। मुख्य अंतर यह है कि जीडीपी एक क्षेत्र जैसे भारत का कुल आउटपुट है और सकल राष्ट्रीय उत्पाद (जीएनपी) एक क्षेत्र के सभी नागरिकों का कुल आउटपुट है। सकल देशी उत्पाद (जीडीपी) से पूंजी के डेप्रिसिएशन को घटाकर निवल देशी उत्पाद (एनडीपी) प्राप्त किया जाता है। निवल राष्ट्रीय उत्पाद (एनएनपी) प्राप्त करने के लिए सकल राष्ट्रीय उत्पाद (जीएनपी) से पूंजी ह्रास (डेप्रिसिएशन ऑफ कैपिटल) को घटाया जाता है।

☞ **बाज़ार मूल्य और कारकों (फैक्टर्स) की लागत की अवधारणा (मार्केट प्राइस और फैक्टर कॉस्ट):** बाज़ार मूल्य पर राष्ट्रीय उत्पाद का मूल्यांकन (वैल्यूएशन) अंतिम क्रेताओं द्वारा किया गया वास्तविक भुगतान है जबकि फैक्टर कॉस्ट पर राष्ट्रीय उत्पाद का मूल्यांकन, अंतिम उत्पादन में अपने योगदान के लिए, उत्पादन के कारकों द्वारा अर्जित की गई राशि का हिसाब है। अप्रत्यक्ष कर सब्सिडी से जितना अधिक है वही बाज़ार मूल्य और फैक्टर कॉस्ट पर आउटपुट का अंतर है।

☞ **वर्तमान मूल्यों और स्थिर मूल्यों पर जीडीपी (वास्तविक जीडीपी):** वर्तमान और स्थिर दोनों मूल्यों पर जीडीपी को निकाला जा सकता है। जीडीपी वर्तमान मूल्य (करेंट प्राइस) पर तेजी से बढ़ने का कारण मूल्य वृद्धि का असर भी होता है। परंतु स्थिर मूल्यों (कॉन्स्टैंट प्राइस) पर निकाली गई जीडीपी से यह पता चलता है कि उत्पादन (आउटपुट) की मात्रा किस तरह बदल रही है। जीडीपी का स्थिर मूल्य आकलन (कॉन्स्टैंट प्राइस एस्टिमेट) को प्राप्त करने के लिए एक आधार अवधि (बेस पीरियड) के संदर्भ में मूल्यों (वैल्यू) को व्यक्त किया जाता है। सकल देशी उत्पाद (जीडीपी) के प्रत्येक घटक (खपत/उपभोग, निवेश, निर्यात, आयात) को वर्तमान मूल्यों और स्थिर मूल्यों दोनों पर मापा जाता है, जिससे अर्थशास्त्री यह समझ पाते हैं कि वास्तविक आउटपुट में कैसे परिवर्तन आ रहा है या प्रत्येक प्रकार के खर्च के लिए मांग कैसे बदल रही है या मुद्रा स्फीति के एडजेस्टमेंट के बाद आय में कैसे परिवर्तन आ रहे हैं।

सकल घरेलू उत्पाद अपस्फीतिकारक (जीडीपी डिफ्लेक्टर) नामांकित (नॉमिनल) (या मौजूदा मूल्य) जीडीपी और वास्तविक जीडीपी (या शृखंला मात्रा/चेन वाल्यूम) आकलन का अनुपात है।

प्रति व्यक्ति आय से तात्पर्य है कि देश की कुल वार्षिक आय का कितना हिस्सा प्रत्येक व्यक्ति मौद्रिक रूप में प्राप्त कर रहा है। दूसरे शब्दों में यह बताता है कि देश की कुल वार्षिक आय को प्रत्येक आदमी में बराबर-बराबर बांटा जाए तो प्रत्येक नागरिक को कितना मिलेगा। यह प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय उत्पाद बतलाता है।

भारत में राष्ट्रीय आय का संकलन (कंपाइलेशन)

सांख्यिकी एवं योजना कार्यान्वयन मंत्रालय के अधीन कार्यरत केंद्रीय सांख्यिकी संगठन (सीएसओ) को देश के राष्ट्रीय आय संकलन (कंपाइलेशन) का कार्य सौंपा गया है। इस कार्य में सीएसओ निम्नलिखित तरीकों का उपयोग करता है:

☞ उत्पाद/आउटपुट विधि- वस्तु उत्पादन क्षेत्र यथा, कृषि, उद्योग आदि के लिए

☞ आय विधि-तृतीयक यथा सेवा क्षेत्र के लिए

सीएसओ निम्नलिखित प्रमुख विषय क्षेत्रों के अंतर्गत जीएनपी का संरचनात्मक ढांचा प्रस्तुत करता है:

(i) प्राथमिक क्षेत्र (कृषि क्षेत्र) -कृषि, वन उद्योग, लकड़ी काटने का कारोबार (लॉगिंग), मछली पालन, खनन और उत्खनन (माइनिंग एंड क्वैरिंग)

(ii) द्वितीयक क्षेत्र (उद्योग क्षेत्र) विनिर्माण (मैन्यूफैक्चरिंग), बिजली, गैस और जल आपूर्ति (गैस एंड वाटर सप्लाई)

(iii) तृतीयक क्षेत्र (सेवा क्षेत्र) - निर्माण (कन्स्ट्रक्शन), व्यापार, होटल, परिवहन और संचार (ट्रांसपोर्ट एंड कम्यूनिकेशन), फाइनैंस, इंश्योरेंस, रियल इस्टेट और व्यवसाय सेवा

इतने व्यापक वर्गीकरण का उद्देश्य यह है कि आर्थिक विकास के विभिन्न चरणों में अर्थव्यवस्था के विभिन्न सेक्टरों के

सारणी - 1

(प्रतिशत)

वर्ष	कृषि और संबद्ध कार्यकलाप	उद्योग	सेवा
1950-51	55.1	10.6	34.0
1960-61	50.6	13.1	35.9
1970-71	44.3	15.4	40.2
1980-81	37.9	17.4	44.6
1990-91	31.4	19.8	48.8
2000-01	23.9	20.0	56.1
2001-02	24.0	19.3	56.7
2002-03	21.4	19.9	58.7
2003-04	21.7	19.4	58.9
2004-05	20.2	19.6	60.2
2005-06	19.5	19.4	61.1
2006-07	18.5	19.5	62.0
2007-08	17.8	19.2	63.0
2008-09	17.0	18.5	64.5

योगदान पर प्रकाश पड़े। केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन जीडीपी के त्रैमासिक और वार्षिक आकलन जारी करता है।

अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्र -जीडीपी में योगदान

विगत वर्षों में जीडीपी के विभिन्न प्रमुख घटकों अर्थात् कृषि और संबद्ध कार्यकलाप (प्राथमिक), उद्योग (द्वितीयक) और सेवा (तृतीयक) का योगदान सारणी-1 में देखा जा सकता है।

नीचे दिए गए चार्ट-1 से देखा जा सकता है कि कृषि और संबद्ध गतिविधियों का हिस्सा 1950-51 में 55.1 प्रतिशत से घटकर 2008-09 में 17.0 प्रतिशत हो गया, जो कि भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि क्षेत्र की हिस्सेदारी में गिरावट का संकेत है। उद्योग का हिस्सा 1950-51 में 10.6 प्रतिशत से बढ़कर 2000-01 में 20.0 प्रतिशत हो गया और फिर धीरे-धीरे घटकर 2008-09 में 18.5 प्रतिशत हो गया। सेवाओं की हिस्सेदारी 1950-51 में 34.0 प्रतिशत से बढ़कर 2008-09 में 64.5 प्रतिशत हो गयी, जो कि भारतीय अर्थव्यवस्था में सेवाओं की बढ़ती भूमिका का संकेत है।

चार्ट - 1

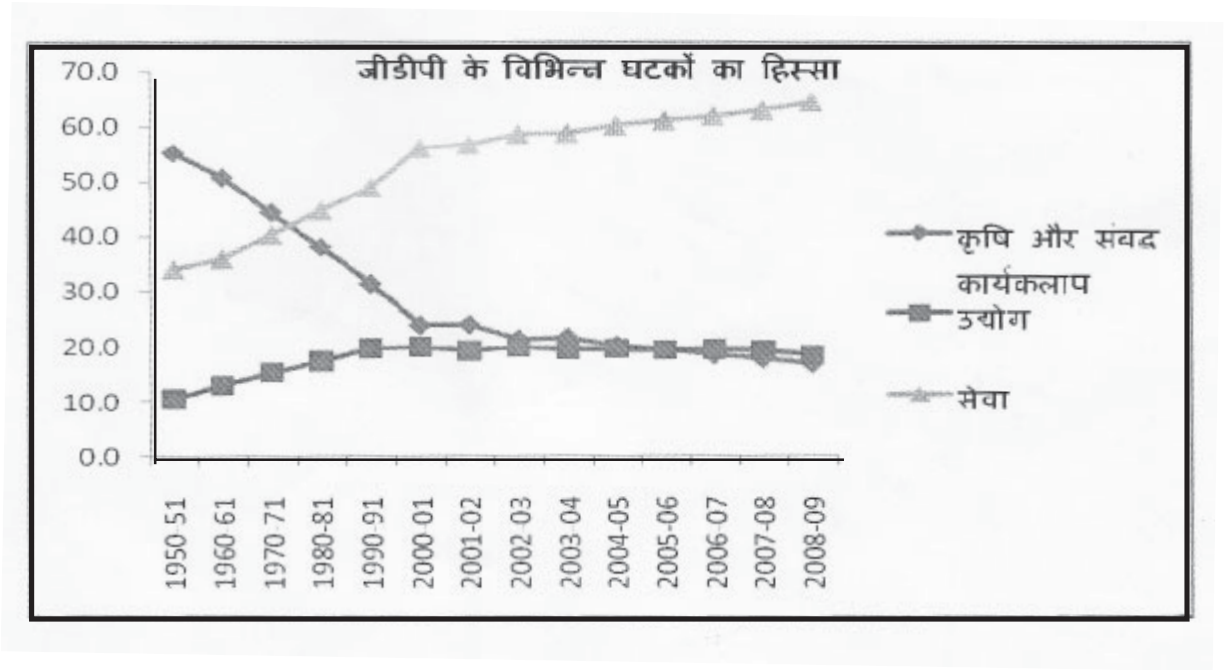

सकल घरेलू उत्पाद के विभिन्न घटकों का विकास

सारणी-2 और चार्ट-2 में सकल घरेलू उत्पाद के विभिन्न घटकों का विकास देखा जा सकता है।

सारणी-2

वर्ष	जीडीपी कारक लागत	कृषि और संबद्ध कार्यकलाप	उद्योग	सेवा
2000-01	4.4	-0.2	6.4	5.7
2001-02	5.8	6.3	2.4	6.9
2002-03	3.8	-7.2	6.8	7.5
2003-04	8.5	10.0	6.0	8.8
2004-05	7.5	0.0	8.5	9.9
2005-06	9.5	5.8	8.1	11.2
2006-07	9.7	4.0	10.7	11.3
2007-08	9.0	4.9	7.4	10.8
2008-09	6.7	1.6	2.6	9.4

यह स्पष्ट है कि 2000-01 से 2008-09 के दौरान, सेवा क्षेत्र, कृषि और उद्योग के मुकाबले ज्यादा तेजी से बढ़ा है। कृषि ने वर्ष 2002-03 में नकारात्मक वृद्धि दर्ज की और फिर उद्योगों और सेवाओं की तुलना में 2003-04 में 10.0 प्रतिशत की सबसे अधिक वृद्धि दर्ज की। लेकिन उद्योग और सेवा क्षेत्र की तुलना में कृषि क्षेत्र में 2004-05 से 2008-09 के दौरान विकास की दर कम रही है। 2000-01 से 2008-09 के दौरान सेवा क्षेत्र कृषि और उद्योग के मुकाबले ज्यादा तेजी से बढ़ा है। उद्योग की विकास दर 2006-07 में बढ़ी और फिर गिरावट दिखी (2008-09 में 2.6 प्रतिशत तक पहुंची)।

प्रति व्यक्ति आय की विकास दर

सारणी-3 और चार्ट-3 से प्रति व्यक्ति आय (जो कि प्रति व्यक्ति आय जीएनपी लागत कारकों पर स्थिर मूल्य पर मापी गई है) और जनसंख्या की विकास दर को देखा जा सकता है।

सारणी-3

वर्ष	प्रति व्यक्ति जीएनपी लागत कारकों पर स्थिर मूल्य (आधार वर्ष - 99-2000)	प्रति व्यक्ति आय की विकास दर	जनसंख्या (मिलियन)	जनसंख्या की विकास दर
2001-02	18769	3.8	1040	2.1
2002-03	19219	2.4	1056	1.5
2003-04	20553	6.9	1072	1.5
2004-05	21742	5.8	1089	1.6
2005-06	23467	7.9	1106	1.6
2006-07	25400	8.2	1122	1.4
2007-08	27371	7.8	1138	1.4

चार्ट-2

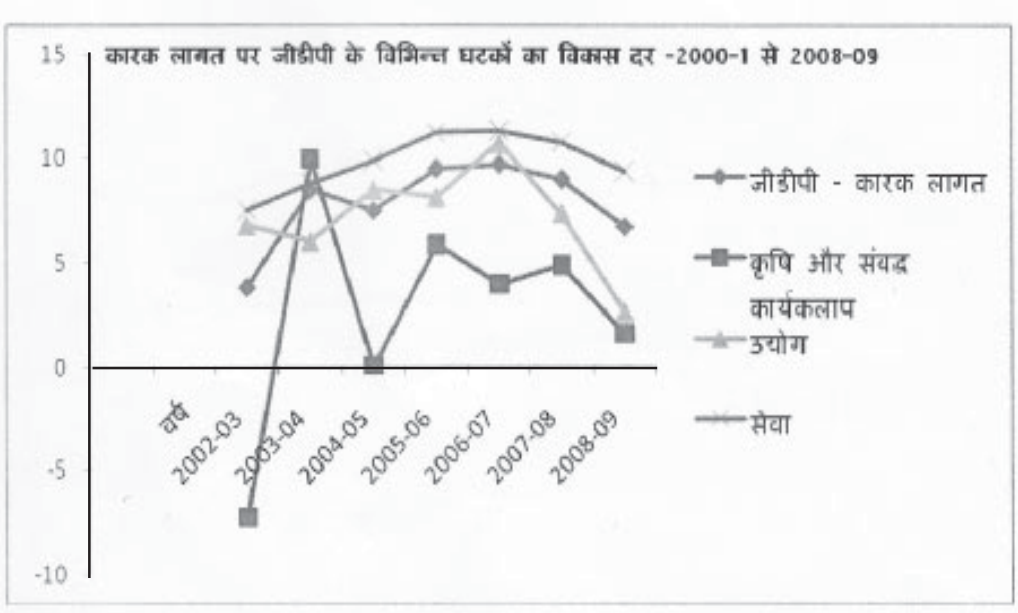

चार्ट- 3

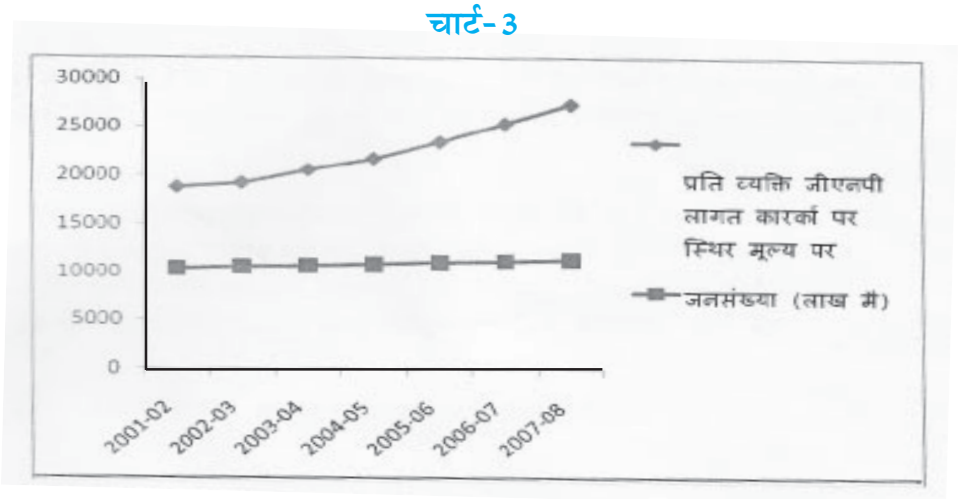

यह देखा जा सकता है कि प्रति व्यक्ति आय की विकास दर जनसंख्या वृद्धि की दर से अधिक है, जो यह बताता है कि वास्तविक रूप में समृद्धि हुई है। हालांकि, आय के वितरण में असमानता के कारण गरीबी रेखा से नीचे रहने वाली जनसंख्या के अनुपात में कोई उल्लेखनीय सुधार नहीं हुआ है।

निष्कर्ष

किसी अवधि में सकल देशी उत्पाद (जीडीपी) के जरिये राष्ट्रीय आय में हुई वृद्धि का अध्ययन यह आकलन करने में सहायक होता है कि अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में कितना आर्थिक विकास हुआ है। जैसा कि उपर्युक्त विश्लेषण में हमने देखा, भारत की अर्थव्यवस्था विकासशील रही है और इसमें 1950 एवं 1960 के दशकों में भारत के समग्र आर्थिक विकास में कृषि क्षेत्र का योगदान बहुत अधिक था जो कि क्रमशः कम होते-होते 2008-09 में 17 प्रतिशत रह गया। इसका कारण यह है कि अन्य क्षेत्रों में तेजी से विकास हुआ, विशेषकर सेवा क्षेत्र में जिसकी हिस्सेदारी 1950-51 के 34 प्रतिशत से बढ़कर 2008-09 में 64.5 प्रतिशत हो गई। उद्योग क्षेत्र 1951-52 के 10.6 प्रतिशत से स्थिर गति से बढ़ते हुए 2000-01 में 20.00 प्रतिशत तक पहुंचा और उसके बाद इसमें ठहराव आया है।

वर्ष 2000-01 से 2008-09 तक के क्षेत्रवार विकास के अध्ययन से यह बात सामने आती है कि कई कारणों से, जिनमें कुछ मनुष्य के नियंत्रण से बाहर हैं, कृषि अत्यधिक उतार-चढ़ाव वाला क्षेत्र रहा जबकि सेवा क्षेत्र कमोबेश स्थिर रहा व उतार-चढ़ाव इसमें अपेक्षाकृत रूप से कम रहे। इस अवधि में उद्योग क्षेत्र में भी उतार-चढ़ाव रहा। 2000-01 से 2008-09 की अवधि को देखें तो सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में 2006-07 तक लगातार विकास की दर में वृद्धि हुई है; इसके बाद समग्र रूप से आर्थिक मंदी के प्रभाव के कारण इसमें ह्रास आया है।

आर्थिक विकास आर्थिक प्रगति को दर्शाता है जिसका अर्थ है कि किसी अर्थव्यवस्था में लोगों की आर्थिक स्थिति बेहतर हो रही है और सामान्यतः इसे प्रति व्यक्ति आय में हो रही बढ़ोतरी से मापा जाता है जिसके पीछे यह अवधारणा है कि विकास का लाभ समाज के विभिन्न वर्गों तक पहुंच रहा है। आंकड़ों से देखा गया है कि प्रति व्यक्ति आय में पिछले कई सालों से लगातार वृद्धि हुई है, फिर भी गरीबी रेखा के नीचे रहने वालों के अनुपात में ज्यादा अंतर नहीं आ पाया है तथा उनके जीवन स्तर पर कोई खास असर नहीं हुआ है। इसका मुख्य कारण आय वितरण में विषमता को माना जा रहा है।

स्रोत : प्रिंसिपल्स ऑफ माइक्रोइकॉनोमिक्स- सी रंगराजन एंड बी एच ढोलकिया
इंडियन इकॉनॉमी - आर दत्त एंड के पी सुंदरम
केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन, प्रकाशन और वेबसाइट
हैंड बुक ऑफ स्टैटिस्टिक्स ऑन इंडियन इकॉनॉमी, भारतीय रिज़र्व बैंक

संकलन : श्रीमती सावित्री सिंह
सहायक महाप्रबंधक
राजभाषा विभाग, मुंबई

बैंकिंग के बदलते स्वरूप के साथ वित्तीय क्षेत्र के नए-नए खंडों में बैंकिंग सुविधाओं की पहुंच हो चुकी है जिनमें से एक पूंजी बाज़ार भी है। बैंकिंग प्रणाली के आरंभ से लेकर गत शताब्दी तक पूंजी बाज़ार की गतिविधियों में उसका दखल न के बराबर था लेकिन बदलती अर्थसंरचना ने बैंकिंग को अर्थव्यवस्था के सर्वथा नए क्षेत्र में पदार्पण के लिए बाध्य कर दिया। आज हम पूंजी बाज़ार से जुड़े सभी क्रियाकलापों में बैंकिंग प्रणाली की प्रमुख भूमिका को देख सकते हैं। आइए इस बार हम पूंजी बाज़ार से जुड़ी कुछ ऐसी संकल्पनाओं का परिचय प्राप्त करें जिन्हें हमने अक्सर सुना एवं पढ़ा तो होता है लेकिन उनके सही तात्पर्य से हम अनभिज्ञ होते हैं।

Primary Market प्राथमिक बाज़ार

प्राथमिक बाज़ार में आम जनता को प्रतिभूतियों (यथा शेयर/बांड/डिबेंचर) में निवेश करने हेतु आमंत्रित किया जाता है जिनकी सहायता से पूंजी अथवा निधि इकट्ठी की जाती है। प्राथमिक बाज़ार में शेयरों/बांडों/डिबेंचरों को जारी करने से पूर्व संबंधित कंपनियों को सेबी द्वारा इस संबंध में जारी किए गए दिशानिर्देशों एवं कंपनी अधिनियम के प्रावधानों का पालन करना होता है। इस बाज़ार में बहुत से मध्यस्थ जैसे कि मर्चंट बैंकर, इश्यू मैनेजर, लीड मैनेजर आदि महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। बैंक नए इश्यू में अंशदान कर इस बाज़ार का हिस्सा बन जाते हैं।

Secondary Market अनुषंगी/द्वितीयक बाज़ार

शेयरों को प्राथमिक बाज़ार में आम जनता को जारी किए जाने और /अथवा स्टॉक एक्सचेंज में सूचीबद्ध किए जाने के बाद जिस बाज़ार में उनका कारोबार किया जाता है उसे द्वितीयक बाज़ार के नाम से जाना जाता है। इसमें इक्विटी एवं उधार बाज़ार का समावेश है। निवेशक इस बाज़ार में पहले से मौजूद/पुनः जारी किए गए शेयरों का कारोबार करते हैं। ये बोली लगानेवाले ऑक्शन अथवा डीलर बाज़ार के रूप में हो सकते हैं। स्टॉक एक्सचेंज, बोलीवाले बाज़ार एवं काउंटर पर शेयर क्रय-विक्रय बाज़ार, डीलर बाज़ार के उदाहरण हैं। आम निवेशकों के लिए प्रतिभूतियों का कारोबार करने की दृष्टि से ये बाज़ार एक उपयोगी मंच की भूमिका निभाते हैं। बैंक डीमैट खातों के माध्यम से इस बाज़ार के कारोबार को सुचारू रूप से चलाने में मदद करते हैं।

अनुषंगी/द्वितीयक बाज़ार के कुछ लिखत इस प्रकार हैं

i) Equity Shares इक्विटी शेयर

यह आम शेयर होते हैं और किसी भी कारोबार में शेयरधारक की आंशिक भागीदारी को दर्शाते हैं। इक्विटी शेयरधारक कंपनी के सदस्य होते हैं और उन्हें वोट देने का अधिकार प्राप्त होता है।

ii) Rights Issue/Rights Shares अधिकार निर्गम/ शेयर

कंपनियां कभी-कभी मौजूदा शेयरधारकों को ही विशेष रूप से उनके द्वारा धारित शेयरों के अनुपात में नए शेयर जारी करती हैं। ऐसे शेयर अधिकार निर्गम/शेयर के नाम से जाने जाते हैं।

iii) Bonus Shares बोनस शेयर

कंपनियां कई बार अपना विस्तार करने तथा वित्तीय सुदृढ़ता के लिए निधियों को आरक्षित करती हैं। शेयरधारकों को संतुष्ट करने तथा पूंजी और अर्जित लाभ के बीच सामंजस्य दर्शाने के लिए वे अपने वर्तमान शेयरधारकों को उनके द्वारा धारित शेयरों के अनुपात में शेयर जारी करती हैं। इसके लिए वे पिछले वर्ष के

दौरान अर्जित लाभ में से संचित राशि का पूंजीकरण करते हुए अपने शेयरधारकों को बिनामूल्य शेयर जारी करती हैं जिन्हें बोनस शेयर के नाम से जाना जाता है। कई बार ऐसे शेयर प्रीमियम खाते से भी जारी किए जाते हैं। बोनस शेयर जारी करने के लिए पूंजी-निर्गम नियंत्रक की पूर्व अनुमति लेना जरूरी है।

iv) Preference Shares अधिमानी शेयर

ये ऐसे शेयर होते हैं जिनके धारकों को विशेषाधिकार प्राप्त होता है। अधिशेष राशि के भुगतान की स्थिति में इनके धारकों को इक्विटी शेयरधारकों के मुकाबले वरीयता प्रदान की जाती है। कंपनी के परिसमापन की स्थिति में भी इनका दावा इक्विटी शेयरधारकों से पहले स्वीकार किया जाता है लेकिन इनके पहले ऋणदाताओं, बांड/डिबेंचर धारकों के दावों को तरजीह दी जाती है। अधिमानी शेयरधारकों को मताधिकार प्राप्त नहीं होता लेकिन ये निश्चित दर पर परिकलित नियमित लाभांश के हकदार होते हैं।

v) Security Receipts प्रतिभूति रसीद

जब कोई प्रतिभूतिकरण कंपनी अधिग्रहीत वित्तीय आस्तियों (बैंक के एनपीए) को संस्थागत निवेशकों को किसी योजना के तहत बेचती है तो उस स्थिति में वह निवेशकों को उक्त आस्तियों के समतुल्य नई प्रतिभूतियां अथवा प्रतिभूति रसीद जारी करती है। इस तरह से जारी रसीदों से निवेशक को संबंधित आस्ति पर पूर्ण अधिकार प्राप्त हो जाता है।

vi) Government Securities सरकारी प्रतिभूतियां

ये भारत सरकार की बाज़ार उधारी कार्यक्रम के तहत भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा जारी किए जाने वाले ऐसे लिखत होते हैं जो जोखिम रहित होते हैं और इन पर निश्चित दर पर ब्याज देय होता है। चूंकि ये प्रतिभूतियां एक सार्वभौमिक सत्ता अर्थात सरकार द्वारा जारी की जाती हैं अतएव इनमें निवेश किए जाने पर जोखिम की संभावना न के बराबर होती है। इन पर दिया जाने वाला ब्याज छमाही आधार पर एक निश्चित तारीख को अदा किया जाता है। ये प्रतिभूतियां अल्पावधि (एक वर्ष से कम अवधि की) से लेकर दीर्घावधि (तीस वर्ष तक) परिपक्वता वाली होती हैं। सरकार जीरो कूपन बांड अर्थात ब्याज रहित प्रतिभूतियां भी जारी करती है।

vii) Debentures डिबेंचर

डिबेंचर किसी कंपनी द्वारा जारी किए जाने वाले ऐसे बांड होते हैं जिन पर एक निर्धारित दर पर ब्याज देय होता है और आम तौर पर उस ब्याज की अदायगी छमाही आधार पर एक निश्चित तारीख पर की जाती है। एक निश्चित तारीख को डिबेंचरों का मोचन करने पर मूल राशि का पुनर्भुगतान किया जाता है। डिबेंचर धारक के पक्ष में कंपनी की आस्तियों की जमानत के द्वारा इन डिबेंचरों पर सुरक्षा प्रदान की जाती है।

viii) Bonds बांड

बांड एक परक्राम्य प्रमाणपत्र होते हैं जो जारीकर्ता की ऋणग्रस्तता को दर्शाते हैं। आम तौर पर ये असुरक्षित होते हैं और इन्हें कोई कंपनी, नगरपालिका अथवा सरकार द्वारा जारी किया जाता है। जब कोई निवेशक किसी बांड में निवेश करता है तो उसका तात्पर्य यह है कि वह बांड जारी करने वाले को उतनी राशि उधार दे रहा है जिसके लिए उसे बांड जारीकर्ता से यह वचन मिलता है कि वह बांड के परिपक्व होने की निश्चित तारीख को उधार की राशि निवेशक को लौटा देगा। आम तौर पर उधार की अवधि के दौरान बांड जारीकर्ता द्वारा निवेशक को नियमित अंतराल पर निर्धारित दर पर ब्याज की अदायगी की जाती है। बांड के विविध प्रकार निम्नानुसार हैं:

(क) Coupon Bonds कूपन बांड

ये साधारण बांड होते हैं जिस पर जारीकर्ता द्वारा निवेशक/धारक को पूर्वनिर्धारित दर पर (जिन्हें कूपन के नाम से जाना जाता है) सहमत अंतराल (आम तौर पर साल में दो बार) पर ब्याज की अदायगी की जाती है। ये जितनी अवधि के लिए जारी किए जाते हैं वही इनकी परिपक्वता अवधि को दर्शाता है। चूंकि इन बांडों पर एक निश्चित ब्याज की राशि प्राप्त होती है अतएव अनुषंगी या द्वितीयक बाज़ार में इनका कारोबार परिपक्वता पर प्राप्त प्रतिफल के आधार पर किया जाता है।

(ख) Zero Coupon Bonds जीरो कूपन बांड

ऐसे बांड जिन्हें जारी किए जाते समय उन पर छूट या डिस्काउंट दिया जाता है लेकिन परिपक्वता के समय उन पर अंकित पूरे मूल्य की अदायगी की जाती है उन्हें जीरो कूपन बांड के नाम से जाना जाता है। इन पर आवधिक रूप से कोई ब्याज अदा नहीं किया जाता। जारी के समय इन बांडों की कीमत और मोचन के समय की कीमत का अंतर ही इन पर मिलनेवाला प्रतिफल है। इन बांडों के धारकों को केवल एक बार ही भुगतान प्राप्त होता है और वह भी इनकी परिपक्वता के समय।

(ग) Convertible Bonds परिवर्तनीय बांड

ऐसे बांड जिन्हें निवेशक अपनी इच्छानुसार एक निश्चित परिवर्तनीय मूल्य पर शेयरों में बदल सके उन्हें परिवर्तनीय बांड के नाम से जाना जाता है।

(ix) Commercial Paper वाणिज्यिक पत्र

वाणिज्यिक पत्र किसी कंपनी की बाज़ार उधारी को दर्शाते हैं। ये एक निश्चित राशि की अल्पावधि भुगतान की वचनबद्धता के परिचायक हैं। कंपनियों द्वारा इन्हें बाज़ार में या तो सीधे ही उतारा जाता है या फिर विशेषीकृत मध्यस्थों के माध्यम से। ये मुद्रा बाज़ार के लिखत होते हैं और आम तौर पर 90 दिनों के लिए जारी किए जाते हैं। ज्यादातर उच्च साख रेटिंगवाली कंपनियों द्वारा इन्हें जारी किया जाता है और ये प्रामिसरी नोट के रूप में होते हैं जिनका मोचन परिपक्वता पर सममूल्य पर किया जाता है। भारत में इनकी शुरूआत वर्ष 1990 से हुई थी।

(x) Certificate of Deposits जमा प्रमाण पत्र

मुद्रा बाज़ार के लिखतों में विस्तार करने और निवेशकों को अपनी अल्पकालीन अधिशेष निधियों को निवेश करने के और मौके उपलब्ध कराने के उद्देश्य से भारत में वर्ष 1989 से जमा प्रमाणपत्रों को बाज़ार में उतारा गया। जमा प्रमाणपत्र मुद्रा बाज़ार के बेचनीय लिखत हैं और ये किसी बैंक अथवा पात्र वित्तीय संस्थान में एक निर्धारित अवधि के लिए जमा की गई राशियों के लिए अमूर्त रूप में जारी किए जाते हैं। इनकी न्यूनतम परिपक्वता अवधि 8 दिनों की होती है।

(xi) Treasury Bills खजाना बिल

सरकार अपनी नकदी की जरूरतों को पूरा करने के लिए भारतीय रिज़र्व बैंक के माध्यम से अल्पावधि (इक्यानबे दिन तक) की धारक प्रतिभूतियों को जारी करती है जिन्हें खजाना बिलों के नाम से जाना जाता है। इन पर कोई ब्याज नहीं दिया जाता और इन्हें डिस्काउंट पर जारी किया जाता है।

(xii) Revocable letter of Credit खुला साख पत्र

यह साख-पत्र का वह प्रकार है जिसके अंतर्गत साखपत्र खोलने वाले बैंक को बिना हिताधिकारी की सहमति के साखपत्र में संशोधन करने अथवा उसे रद्द करने का अधिकार होता है। इसके ठीक विपरीत स्थितिवाले साखपत्र को बंद साखपत्र (**Irrevocable letter of Credit**) के रूप में जाना जाता है जिसमें ग्राहक अथवा आवेदनकर्ता (जिसके अनुरोध पर बैंक द्वारा साखपत्र जारी किया गया हो) की सहमति के बिना साखपत्र में कोई बदलाव करने या उसे निरस्त करने का अधिकार बैंक को नहीं होता।

Rolling Settlement आवर्ती निपटान

आवर्ती निपटान के अंतर्गत शेयर/इक्विटी बाज़ार में किसी एक कारोबारी दिन के दौरान किए गए लेन-देन का निपटान उस दिन की निवल देयताओं के आधार पर किया जाता है। इस समय आवर्ती निपटान के अंतर्गत किए गए लेन-देन को टी+ 2 के आधार पर निपटाया जाता है जिसमें टी कारोबार के दिन को दर्शाता है। इस तरह से लेनदेन जिस कारोबारी दिन को किया जाता है उसके अलावा और दो दिन के भीतर उसका निपटान किया जाना अपेक्षित है। अर्थात यदि कोई लेन-देन सोमवार को किया गया है तो उसका निपटान बुधवार को किया जाएगा।

Pay-in-day & Pay-out-day भुगतान प्राप्ति एवं भुगतान अदायगी दिन

जिस दिन शेयर बाज़ार का ब्रोकर प्रतिभूतियों के लिए

एक्सचेंज को या तो भुगतान करता है या फिर उनकी डिलीवरी करता है उसे 'पे इन' दिन के नाम से जाना जाता है। जिस दिन एक्सचेंज द्वारा ब्रोकर को प्रतिभूतियों के लिए या तो भुगतान किया जाता है या फिर उनकी डिलीवरी की जाती है उसे 'पे आउट' दिन के नाम से जाना जाता है। इसके तुरंत बाद एक्सचेंज इस संबंध में प्रेस विज्ञप्ति जारी करता है। उन्हें यह भी सुनिश्चित करना होता है कि ब्रोकर एक दिन के भीतर ही ग्राहक को प्रतिभूतियों के संबंध में भुगतान कर देते हैं या फिर उनकी डिलीवरी कर देते हैं। यहां निपटान चक्र टी+2 दिन का होता है।

Securities Lending Scheme प्रतिभूति उधार योजना

यह एक ऐसी योजना है जिसके तहत निवेशक आइडल प्रतिभूतियों को क्लियरिंग कॉर्पोरेशन को उधार देकर उससे आय अर्जित करता है। स्टॉक एक्सचेंज का क्लियरिंग कॉर्पोरेशन नोडल एजेंसी का काम करता है। कमी की स्थिति में क्लियरिंग कॉर्पोरेशन सदस्यों की ओर से प्रतिभूतियों को उधार लेता है। यदि इस संबंध में चूक करनेवाला विक्रेता ब्रोकर यदि निर्धारित समयावधि के भीतर डिलीवरी नहीं कर पाता तो क्लियरिंग कॉर्पोरेशन को खुले बाज़ार से प्रतिभूतियां खरीदनी पड़ती हैं और सात कारोबारी दिनों के भीतर उसे उधारकर्ता को लौटाना होता है। यदि कॉर्पोरेशन, बाज़ार से प्रतिभूतियों को खरीदने की स्थिति में नहीं होता है तो संबंधित लेन-देन को समाप्त कर दिया जाता है।

Revolving Line of Credit आवर्ती ऋण सुविधा

बैंक द्वारा आपने ग्राहक के साथ किया गया ऐसा करार जिसमें वह ग्राहक को एक निश्चित राशि उधार देता है और ग्राहक द्वारा उस राशि का भुगतान किए जाने पर पुनः उधार दिए जाने की स्वीकृति प्रदान करता है।

Top-down खोजी निवेश रणनीति

निवेश की एक ऐसी रणनीति जिसमें पहले अर्थव्यवस्था के ऐसे क्षेत्रों अथवा उद्योगों की पहचान की जाती है जिनमें निवेश किया जा सकता है और उसके बाद उस क्षेत्र अथवा उद्योग की उन सर्वोत्कृष्ट कंपनियों की पहचान की जाती है जिनमें निवेश करना फायदेमंद विकल्प हो सकता है। इस तरह से इस प्रकार की निवेश रणनीति में सर्वप्रथम अर्थव्यवस्था के समग्र विहंगावलोकन और फिर किसी क्षेत्र अथवा उद्योग पर जीरो डाउन करने के बाद कंपनी विशेष की पहचान कर निवेश का निर्णय लिया जाता है। अंततः यह निर्णय इक्विटी या प्रतिभूति की विशेषताओं पर जाकर केंद्रित हो जाता है।

Financial Health वित्तीय स्थिति

यह किसी व्यक्ति अथवा कंपनी की माली अथवा वित्तीय स्थिति को दर्शाने वाली संकल्पना है। किसी व्यक्ति अथवा कंपनी के वित्तीय स्वास्थ्य के ठीक होने से तात्पर्य है कि वह व्यक्ति या कंपनी अपने सभी भुगतान समय पर करती है और उसे अपने धन का प्रबंधन बेहतर तरीके से करना आता है। खराब वित्तीय स्वास्थ्य वाले व्यक्ति अथवा कंपनी की स्थिति ठीक इसके विपरीत होती है क्योंकि धन की कमी के कारण वह अपने भुगतान समय पर नहीं कर पाते।

Bull Market तेजड़िया बाज़ार

जब एक लंबी अवधि के दौरान निवेश में ऐतिहासिक उछाल देखने में आए तो उस बाज़ार को तेजड़िया बाज़ार की संज्ञा दी जाती है। आर्थिक गतिविधियों में उछाल अथवा आर्थिक पुनरूत्थान की स्थिति या फिर निवेशकों के मनोविज्ञान में आए बदलाव की वजह से शेयरों की खरीद फरोख्त में एक असामान्य तेजी देखी जा सकती है जिसके आगे चलकर सकारात्मक परिणाम दिखाई देते हैं। जबकि कई बार दिखावटी कारोबार की वजह से भी बाज़ार में तेजड़िया प्रवृत्ति देखने को मिलती है जो वित्तीय व्यवस्था के लिए खतरे की घंटी हो सकती है।

Originate to distribute ऋण विस्तार

ऋण विस्तार एक ऐसी नवोन्मेषी संकल्पना है जिसमें बैंकों को यह छूट होती है कि वे विनियामक द्वारा निर्धारित की गई सीमा के भीतर अपने ऋण कार्यक्रम का विस्तार कर सकते हैं। अर्थात वे अपने द्वारा धारित प्रतिभूतियों, निधियों एवं निवेशों की समग्र सीमा को ध्यान में रखते हुए उनके आधार पर ऋण देते हैं। लेकिन सेवा करते समय उन्हें यह ध्यान रखना होता है कि ऋण विस्तार से देयताओं को समय पर पूरा करने की उनकी प्रतिबद्धता पर कोई असर न पड़ता हो।

ग्राहक सेवा: बैंकिंग की अनिवार्यता

● देवराज
प्रबंधक
भारतीय रिज़र्व बैंक, कोलकाता

भारतीय बैंकिंग जहां स्वतंत्रता पूर्व वर्ग बैंकिंग का स्वरूप लिये हुए थी वहीं राष्ट्रीयकरण ने सार्वजनिक बैंकों की स्थापना कर जन बैंकिंग की क्रांति को जन्म दिया। इस दौर में भी ग्राहक बैंक की धुरी एवं केंद्र के रूप में ही सम्मानित थे किंतु लालफीताशाही, प्रक्रियात्मक जड़ता, कार्य सम्पन्न होने में विलम्ब, लम्बी कतारें इत्यादि ग्राहक सेवा को कई बार दोयम दर्जे पर पहुंचा देती थीं, साथ ही बैंक शाखाओं का आधारभूत ढाँचा भी कई खामियों का शिकार था। किन्तु उदारीकरण के कारण अर्थव्यवस्था में आए व्यापक फेरबदल ने बैंकिंग जगत में इतनी प्रतिस्पर्धा को जन्म दिया है कि कोई भी बैंक अपने ग्राहक आधार के साथ समझौता नहीं करना चाहेगा। आज ग्राहक आधार की सुरक्षा एवं उसका विस्तार बैंकों की प्राथमिक आवश्यकता बन चुका है इसलिए ग्राहक सेवा बैंकिंग व्यवसाय की अनिवार्यता बन चुकी है। ग्राहक सेवा केवल बैंकिंग उत्पादों का विपणन मात्र न होकर ग्राहक की सभी वित्तीय जरूरतों, जिज्ञासाओं, समस्याओं का समाधान करना भी है। यही कारण है कि आज बैंकों के लिए व्यावसायिक लाभप्रदता से भी ऊंचा दर्जा ग्राहक सेवा को दिया जाता है क्योंकि बैंकिंग व्यवसाय की नींव ही ग्राहक संबंधों पर टिकी है। आज किसी भी वित्तीय संस्था का अस्तित्व, उत्तरजीविता और विकास ग्राहक सेवा और ग्राहक संबंधों के प्रभावी और व्यवहार्य संचालन पर निर्भर करता है। बैंक ग्राहक को वित्तीय संचालन के सहभागी के रूप में देख रहे हैं क्योंकि ग्राहक सेवा आज के युग में जरूरत ही नहीं बल्कि अनिवार्यता बन चुकी है।

आज बैंकों के लिए व्यावसायिक लाभप्रदता से भी ऊंचा दर्जा ग्राहक सेवा को दिया जाता है क्योंकि बैंकिंग व्यवसाय की नींव ही ग्राहक संबंधों पर टिकी है। आज किसी भी वित्तीय संस्था का अस्तित्व, उत्तरजीविता और विकास ग्राहक सेवा और ग्राहक संबंधों के प्रभावी और व्यवहार्य संचालन पर निर्भर करता है।

बैंकिंग से जुड़ी आम शिकायतें

दुर्भाग्यवश ग्राहक सेवा का बैंकिंग उद्योग में सर्वोपरि महत्व होने के बावजूद ग्राहकों की बैंकों के दैनिक संचालन-प्रचालन अथवा स्टाफ के व्यवहार से जुड़ी शिकायतें बढ़ती जा रही हैं। बैंकिंग सेवाओं एवं उसके संचालन से ग्राहकों को होने वाली आम शिकायतें इस प्रकार हैं:-

* बैंक स्टाफ एवं प्रबंधन का ग्राहकों के साथ रूखा, उदासीन एवं खराब व्यवहार जिसके पीछे बैंक स्टाफ का अद्यतन बैंकिंग दिशानिर्देशों से अनभिज्ञता, व्यवहार कुशलता न होना, प्रणालियों तथा प्रक्रियाओं के बारे में सम्यक ज्ञान का अभाव, सेवाओं की तकनीकी संकल्पना एवं संचालन का ज्ञान न होना इत्यादि प्रमुख कारण कार्य करते हैं। यह नितांत जरूरी है कि बैंक प्रबंधन अपने स्टाफ को बैंकिंग उत्पादों/सेवाओं का समुचित प्रशिक्षण प्रदान करें।

* ऋण सुविधाओं की प्राप्ति में लम्बी, उबाऊ अनावश्यक प्रक्रियाओं तथा औपचारिकताओं द्वारा ग्राहकों के कार्य में अनावश्यक देरी एवं मानसिक परेशानी।

* प्रतिबंधात्मक व्यवहार जैसे खाता खोलने, मांग ड्राफ्ट जारी करने अथवा अन्य सेवा प्रदान करने से मना करना जिससे ग्राहकों के अनमोल समय की बरबादी होती है।

* फटे-पुराने नोटों की बदली, छोटे मूल्य के नोटों के लेन-देन तथा सिक्कों की मांग इत्यादि आधारभूत सेवाओं को प्रदान करने से ग्राहक को मना कर देना।

* पत्राचार/ई-मेल इत्यादि का समय पर प्रत्युत्तर न देना जिससे ग्राहकों को अनावश्यक रूप से मानसिक प्रताड़ना से गुजरना पड़ता है।

* आधारभूत संरचना संबंधी खामियां मसलन ग्राहक के लिए बैठने अथवा पीने के पानी की सुविधा न होना, शाखा में किसी कार्यवश प्रतीक्षा कर रहे ग्राहकों के लिए अखबार, पत्रिका आदि का प्रबंध न होना या पंखे-कूलर या ए.सी. का न होना अथवा निष्प्रभावी होना इत्यादि।

* चेक की वसूली में असाधारण देरी, पात्रता के बावजूद ऋण सेवाओं को नहीं बढ़ाना, समय पर शाखा नहीं खोलना, बैंक द्वारा विस्तारित समय में सेवा का अभाव, मांग ड्राफ्ट/ अदायगी आदेश, जमा रसीदें जारी करना तथा नकद संबंधी लेन-देन में असाधारण विलंब, लॉकर आबंटन में आनाकानी करना, सेवाओं के मुकाबले ज्यादा प्रभार अथवा शुल्क लेना इत्यादि। ऐसी अनेक शिकायतों के कारण ही भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा बैंकों के लिए उचित व्यवहार नीति लागू की गयी ताकि सेवाओं एवं उत्पादों के लिए ग्राहकों से समुचित प्रभार ही लिया जाए।

* आवश्यकतानुसार नवोन्मेषी उत्पादों एवं सेवाओं का उपलब्ध न होना। इस प्रकार की परेशानी का सामना अधिकतर छोटे कस्बों एवं ग्रामीण ग्राहकों को करना पड़ता है क्योंकि ग्रामीण एवं अर्ध-शहरी इलाकों में स्थापित बैंक आज भी नवोन्मेष से अछूते ही हैं। साथ ही, छोटे-छोटे ऋणकर्ताओं के प्रति बैंक स्टाफ का उदासीन दृष्टिकोण ग्राहकों की शिकायतों में इजाफ़ा करता है।

* बीमा, साझा निधि (म्युचुअल फंड) तथा ऐसे ही अन्य उत्पादों की बिक्री प्रारम्भ कर दिए जाने के कारण कुछ बैंक शाखाएं छोटे जमा वाले पारम्परिक बैंक ग्राहकों के साथ अच्छा व्यवहार नहीं कर रही हैं वहीं प्रत्यक्ष बिक्री दलालों का ग्राहकों को गुमराह कर बैंक उत्पाद अथवा सेवाएं बेचना भी ग्राहकों के लिए सिरदर्द बन गया है।

* टेली-बैंकिंग, फोन-बैंकिंग, कार्ड आधारित बैंकिंग से जुड़ी अनगिनत शिकायतें ग्राहक असंतुष्टि की परिचायक हैं। इसी तरह इंटरनेट बैंकिंग संचालनों में गड़बड़ियां, मोबाइल बैंकिंग के लिए पंजीकृत होने के बावजूद बैंकिंग प्रचालन करने में असमर्थता, समय मानदंडों का पालन न करना आदि से भी ग्राहकों को परेशानी उठानी पड़ रही है।

* कर्मचारी वर्ग ग्राहकों की जिज्ञासाओं का समाधान करने में सफल नहीं होते क्योंकि वे उचित प्रशिक्षण के अभाव में नवीन उत्पादों एवं सेवाओं से अनभिज्ञ रहते हैं। वर्तमान में निविदा आधारित भर्ती प्रणाली तथा युवाओं का अधिक समय तक किसी संस्थान में कार्य नहीं करने की प्रवृत्ति के बढ़ने के कारण भी बैंक स्टाफ सभी प्रक्रियाओं एवं प्रणालियों से अवगत नहीं होता है जिससे ग्राहक को कष्ट उठाना पड़ता है।

* एटीएम का काम नहीं करना, एटीएम में लेन-देन खाते में दो बार नामे हो जाना, व्यापारी प्रतिष्ठानों में डेबिट कार्ड के प्रयोग करने पर उपयोग से अधिक राशि नामे हो जाना, एटीएम द्वारा मोबाइल रिचार्ज में गड़बड़ियां होना, एटीएम से पैसा बाहर नहीं आना किन्तु खाते में संचालन को दिखा देना इत्यादि।

ग्राहक शिकायतों की यह सूची और भी लम्बी है और इसके लम्बी होने का कारण है ग्राहक शिकायत निवारण मशीनरी का अप्रभावी होना। यद्यपि, भारत में वाणिज्यिक बैंकों में आन्तरिक तौर पर एक व्यापक ग्राहक सेवा ढाँचा स्थापित है साथ ही भारतीय रिज़र्व बैंक का ग्राहक सेवा विभाग, बैंकिंग लोकपाल इत्यादि भी ग्राहक सेवा के लिए समर्पित हैं किन्तु ग्राहक असंतुष्टि एवं शिकायत के मामले साल-दर-साल बढ़ते ही जा रहे हैं क्योंकि बैंकों के स्टाफ एवं शिकायत निवारण मशीनरी का रवैया पुराना, लालफीताशाही एवं संवेदनाहीन रहा है। ग्राहक शिकायतों का निपटारा तब तक संभव नहीं है जब तक कि ग्राहक सेवा स्टाफ 'आत्मन प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्' (जो स्वयं के प्रतिकूल हो वैसा आचरण दूसरे के साथ नहीं करना चाहिए) की नीति के अनुरूप संवेदनशील नहीं होता है और स्वयं को प्रताड़ित ग्राहक के स्थान पर रखकर नहीं देखता है।

ग्राहक सेवा का बढ़ता महत्व

वर्तमान प्रतिस्पर्धात्मक एवं चुनौतीपूर्ण समय में चार्ल्स डार्विन

का 'अस्तित्व के लिए संघर्ष और योग्यतम की उत्तरजीविता' का सिद्धांत अधिक प्रासंगिक हो गया है विशेषकर बैंकिंग उद्योग जिसकी आधारशिला ही ग्राहक है, ग्राहक सेवा को हल्के ढंग से नहीं ले सकता है बल्कि आज बैंक प्रबंधन के सभी स्तरों पर ग्राहक सेवा संबंधी मूल्यों का महत्व पहले से कहीं अधिक महत्वपूर्ण हो गया है। आज ग्राहक सेवा बैंकों के फ्रंट स्टाफ का ही कर्तव्य नहीं है, समूचे बैंकिंग जगत को ग्राहक को केंद्र में रखकर अपनी योजनाओं, नियमों एवं प्रक्रियाओं का प्रबंधन करना होगा। आखिर ग्राहकों में ही बैंकों की संभावनाएं रची-बसी हैं। आज सभी संगठन ग्राहकोन्मुख हैं और जो नहीं हैं वे वर्तमान प्रतिस्पर्धी वातावरण में अपना अस्तित्व कायम नहीं रख पायेंगे। स्पष्ट है कि बैंकों में भी ग्राहक सेवा का महत्व पहले से कहीं अधिक है जिसके लिए अग्रलिखित कारक उत्तरदायी हैं-

* आर्थिक एवं वित्तीय बाज़ार में नए प्रतिस्पर्धियों के आगमन से आज वित्तीय बाज़ार का स्वरूप विक्रेता बाज़ार न रहकर क्रेता बाज़ार का हो चुका है। उदारीकरण एवं वित्तीय अमध्ययीकरण के बढ़ते प्रभाव एवं पूंजी बाज़ार के विस्तार का असर बैंकों पर भी हुआ है। एक ओर उनके निर्गमित क्षेत्र का ग्राहक उन्हें छोड़कर जा रहा है तो दूसरी ओर वह अपने साथ अन्य अच्छे ग्राहकों और निवेशकों को भी ले जा रहा है।

* वर्तमान गलाकाट प्रतिस्पर्धा में आज ग्राहकों के पास विकल्पों की भरमार है। वह अपनी आवश्यकता के अनुसार बैंक का भी चुनाव कर सकता है और बैंकिंग सेवा एवं उत्पाद का भी। विकल्प की उपलब्धता ग्राहक सेवा को प्रभावित कर रही है। कई बार यह देखने में आया है कि बैंक कार्मिक ग्राहक आधार बढ़ाने के फेर में अधिक से अधिक ग्राहक बनाने के लिए झूठे वादे या आश्वासन दे देते हैं जिस वजह से बाद में ग्राहक संबंध प्रभावित होते हैं। साथ ही बैंकों को अपने ग्राहक आधार को उसी सीमा तक विस्तारित करना चाहिए जिसमें उनके लिए पूंजी जोखिम न बढ़े तथा ग्राहकों को समुचित सेवा प्रदान की जा सके।

* निजी एवं विदेशी बैंकों के नई तकनीक एवं प्रौद्योगिकी के साथ प्रतिस्पर्धा में उतरने, होम बैंकिंग, टेली बैंकिंग, प्लास्टिक मनी, स्वचालित मशीनों, कम्प्यूटरीकरण से ग्राहक सेवा प्रबंधन का महत्व और भी बढ़ गया है। आज राष्ट्रीय स्तर पर संचालित होने वाले अधिकांश बैंकों द्वारा ग्राहक सेवा संबंध प्रबंधन के लिए कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर का इस्तेमाल किया जा रहा है।

* कुशल प्रौद्योगिकी से सज्जित, प्रौद्योगिकी चालित सेवाओं एवं उत्पादों से युक्त बैंकों ने ग्राहकों की प्रत्याशाओं को इतना अधिक कर दिया है कि ग्राहक अब बैंक सेवाओं के केंद्र बन गए हैं। बढ़ती प्रत्याशाओं के अनुरूप ग्राहक सेवाओं का प्रबंधन करना अतिमहत्वपूर्ण हो गया है।

* ग्राहकों की अपेक्षाएं, बैंकों से विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति हेतु सहज, सुलभ व प्रतिस्पर्धात्मक दरों पर सेवाओं एवं उत्पादों की प्राप्ति की ओर बढ़ रही हैं। अतएव ग्राहक सेवा प्रबंधन के तहत बैंकों को चाहिए कि वे ग्राहकों की सामाजिक, आर्थिक एवं व्यावहारिक पृष्ठभूमि का ध्यान रखते हुए विभिन्न प्रकार के ऋण उत्पाद एवं सेवाएं ग्राहकों को प्रदान करें इस कार्य में सीआरएम सॉफ्टवेयर उपयोगी साबित हो सकते हैं जिनके बारे में आगे विस्तार से चर्चा की गई है।

* भारतीय मध्यम वर्ग की प्रवृत्तियां अब उपभोक्तावादी हो रही हैं। वह अब बैंकों से आसान व सस्ती ब्याज दरों पर ऋण की अपेक्षा कर रहा है जिससे वह अपनी अभिलाषाओं को वास्तविक रूप दे सके। यह बदलती मनोवृत्ति एक व्यक्ति को कई बैंकों का ग्राहक बना रही है ऐसे में यह स्वाभाविक है कि ग्राहक हर बैंकिंग संचालन में तुलनात्मक रवैया अपनाता है अतएव यह जरूरी है कि बैंक इष्टतम सेवा प्रदान कर ग्राहक की निष्ठा प्राप्त करने का प्रयास करें ताकि ग्राहक के लिए सेवा, आनन्दानुभूति में परिवर्तित हो सके।

* बैंकों से ग्राहकों के संबंध बढ़ती ग्राहक जागरुकता के कारण जटिल होते जा रहे हैं, क्योंकि ग्राहक अपने अधिकार के लिए सजग व सचेत हैं और ग्राहकोन्मुख गुणवत्ता सेवा

प्राप्ति के लिए उनकी आशाएं निरन्तर बढ़ती जा रही हैं। ग्राहक अब केवल वित्तीय उत्पादों मात्र से संतुष्ट नहीं है वरन उसे अपने प्रयोजनों के अनुरूप निर्मित उत्पाद एवं सेवाएं चाहिए। ग्राहकों के मूल्यबोध में परिवर्तन के अनुरूप ग्राहक संतुष्टि को बढ़ाने में सक्षम कदम उठाने चाहिए।

ग्राहक सेवा के विविध पहलू

ग्राहक सेवा और ग्राहक संतुष्टि बहुत कुछ कुशल प्रबंधन एवं सफल संचालन पर निर्भर करती है। एक ग्राहक अपने बैंक से कितनी सुलभतापूर्वक एवं सहजता से मितव्ययी एवं कम समय में सेवाएं एवं उत्पाद प्राप्त करता है यही निर्धारित करता है कि उस बैंक में ग्राहक सेवा नीतियां किस प्रकार की हैं। ग्राहक सेवा एक ऐसी अवधारणा है जिसके हर पहलू का विशेष ध्यान रखने की आवश्यकता है। बैंकिंग व्यवसाय में ग्राहक सेवा के लिए निम्नलिखित पहलू विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं:-

संगठन संबंधी

विदेशी बैंकों के आगमन और उदारीकरण के फलस्वरूप जन्मी प्रतिस्पर्धा ने सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों एवं स्वदेशी बैंकों को व्यापक संगठनात्मक परिवर्तन करने को विवश किया है। परिणामस्वरूप ग्राहक सेवा के प्रति ध्यान देने के लिए वाणिज्यिक बैंकों में चार स्तरीय संरचना लागू की गई है- नीति निर्माण के लिए बोर्ड स्तरीय ग्राहक सेवा समिति, ग्राहक सेवा की समीक्षा के लिए स्थायी समिति, नोडल अधिकारी तथा बैंक शाखा स्तरीय ग्राहक सेवा समिति। किन्तु इस सांगठनिक परिवर्तन का प्रबंधन ग्राहक सेवा उद्देश्यों के अनुरूप एवं अनुकूल करना, कार्मिक नौकरशाही प्रवृत्ति को ग्राहक सेवान्मुखी बनाना नितान्त आवश्यक है।

आधारभूत संरचना संबंधी

बैंक प्रबंधन को चाहिए कि वह बैंक एवं उसकी शाखाओं को सरकारी कार्यालय की भांति न समझ ग्राहक सेवा के मंदिर के रूप में देखें। एक सुसज्जित एवं सुव्यवस्थित बैंक शाखा ग्राहक को बार-बार आने का निमंत्रण देती है जबकि एक बिखरी, अस्त-व्यस्त, मेजों, कुर्सियों की कमी से ग्रस्त बैंक शाखा में कोई भी नहीं जाना चाहेगा। अतः बैंकों को चाहिए कि वे शीघ्रातिशीघ्र अपनी शाखाओं का नवीनीकरण करें और उन्हें साफ-सुथरा, सुसज्जित स्वरूप प्रदान करें। यह सर्वविदित है कि अवसंरचनात्मक कमियों के कारण ही सार्वजनिक बैंकों के कई ग्राहकों ने निजी बैंकों का रुख कर लिया है। यह जरूरी है कि बैंक अपने परिसर में पेयजल, प्रसाधन कक्ष, बैठने की समुचित व्यवस्था करें और उसे साफ-सुथरा रखें।

सूचना प्रौद्योगिकी संबंधी

आधुनिक बैंकिंग प्रौद्योगिकी केंद्रीयकृत नेटवर्किंग, प्रचालन, सीबीएस तथा 24×7×365 सेवा प्रदाता प्रणालियों का समावेशन है जो न्यूनतम मानवीय हस्तक्षेप से बेहतर ग्राहक सेवा प्रदान करने में सक्षम है। ग्राहक सेवा का प्रौद्यागिकीय पक्ष अब पहले से कहीं अधिक महत्वपूर्ण हुआ है। ग्राहक सेवा के कुछ उपयोगी प्रौद्योगिकीय अवयव एटीएम (ऑटोमेटेड टेलर मशीन), सीबीएस (कोर बैंकिंग सोल्यूशन), दूरभाष आधारित बैंकिंग, बैंकाश्योरन्स, स्मार्ट कार्ड बैंकिंग इत्यादि नवीन ग्राहक आधार तैयार करने के लिए नितांत अनिवार्य हो गए हैं। इसी तरह भुगतान एवं निपटान प्रणाली में हुए नवीनतम प्रयोग RTGS, ECS, EFT, NEFT, NDS इत्यादि का सही एवं इष्टतम इस्तेमाल बैंकों को ग्राहकों को आकर्षित करने में मददगार हो सकता है।

प्रक्रिया संबंधी

बैंकों को अपनी कार्यप्रणाली में विद्यमान लालफीताशाही, नौकरशाही एवं विलंब जैसे प्रक्रियात्मक दोषों को दूर कर ग्राहकों को त्वरित एवं सुगम, सुलभ सेवाएं प्रदान करने वाली प्रक्रियाएं अपनानी होंगी ताकि ग्राहक के समय, धन एवं सुविधा का ध्यान रख बैंक ग्राहक के मन में एक अच्छी छवि का निर्माण कर सके। प्रक्रियात्मक लचीलापन एवं जोखिम प्रबंधन को समानान्तर महत्व देकर बैंक अपने एवं ग्राहक दोनों के हितों की रक्षा कर सकता है।

शिकायत निवारण संबंधी

इक्कीसवीं सदी हर क्षेत्र में ग्राहक के सम्मान एवं प्रतिष्ठा में

अभिवृद्धि की सदी है। अतः बैंकिंग जगत को भी ग्राहकों की शिकायतों का शीघ्रातिशीघ्र समाधान करने के लिए शिकायत निवारण तंत्र का सशक्तिकरण करना होगा। भारत में ग्राहक सेवा के लिए सरकार, भारतीय रिज़र्व बैंक, भारतीय बैंकिंग संघ, बैंकिंग लोकपाल, उपभोक्ता अदालत इत्यादि का एक बृहत नियामकीय एवं पर्यवेक्षकीय ढाँचा विद्यमान है। ग्राहक को बैंक संबंधी प्रचालनों से हुई किसी भी असुविधा से उसकी सुरक्षा एवं शिकायत का निवारण करने के लिए उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1988, बैंकिंग लोकपाल योजना 2002/2006 तथा सूचना का अधिकार, 2005 से कानूनी आधार प्रदान किया गया है। भारतीय रिज़र्व बैंक ने भी ग्राहक सेवा की महत्ता को स्वीकार करते हुए जून 2006 में ग्राहक सेवा विभाग की स्थापना की है। अतः बैंकों को अपनी शिकायत निवारण मशीनरी को मुस्तैद एवं सशक्त बनाने के लिए कार्य करना चाहिए।

मानव संसाधन संबंधी

सार्वजनिक बैंकों की कुछ शाखाओं में आज भी ग्राहक को एक बोझ के रूप में देखा जाता है जो कि एक गैर-जिम्मेदाराना रवैया है। यह सोच कि ग्राहक को बैंक की जरूरत है एक पुरातनपंथी अवधारणा हो चुकी है आज बैंकों का अस्तित्व उनके ग्राहक आधार पर टिका है। अतः यह अतिमहत्वपूर्ण हो जाता है कि बैंकों का शीर्ष प्रबंध अपने स्टाफ सदस्यों को ग्राहक सेवा संबंधी लक्ष्यों से अवगत रखे एवं उन्हें ग्राहक सेवा का सुनियोजित शिक्षण एवं प्रशिक्षण प्रदान करे। बैंकों के लिए यह सुनिश्चित करना नितांत जरूरी हो गया है कि बदलते आर्थिक परिदृश्य में किस तरह का व्यवहार कुशल, सृजनात्मक एवं बुद्धिमान मानव संसाधन का सर्वोत्तम प्रबंध एवं प्रयोग किया जाए।

सेवाओं के विपणन संबंधी

भारतीय बैंकों को बाज़ार का पुनरावलोकन कर अपना उत्पाद पोर्टफोलियो विस्तारित करना चाहिए तथा उत्तम विपणन नीतियां अपनाकर ग्राहकों को बेहतर एवं बहुल सेवाएं प्रदान करनी चाहिए। विपणन नीति के अनुरूप प्रशिक्षित स्टाफ की नियुक्ति तथा ग्राहक की आवश्यकताओं एवं मांगों के बारे में अध्ययन एवं अनुसंधान द्वारा आक्रामक विपणन और ग्राहक सुविधा में तालमेल बिठाना चाहिए। आउटसोर्सिंग की परिस्थिति में बाह्य स्टाफ को बैंक के ग्राहक सेवा मापदंडों से अवगत कराना भी बहुत जरूरी है ताकि ग्राहक सेवा संबंधी बैंक के आदर्शों के साथ कोई समझौता नहीं करना पड़े।

उत्तम ग्राहक सेवा के लिए सुझाव

आज के प्रतिस्पर्धी एवं प्रतिद्वंद्वी युग में सभी बैंकों को ग्राहक सेवा का उत्कृष्ट स्तर बनाए रखना होगा तथा ग्राहकों को संतुष्ट कर उनकी निष्ठा प्राप्त करने का हर संभव प्रयास करना होगा तभी बैंक अपना अस्तित्व बनाए रख सकेंगे। बदलते बैंकिंग परिवेश में ग्राहक सेवा अत्यन्त महत्वपूर्ण हो गई है। संपूर्ण बैंकिंग क्षेत्र में जबरदस्त प्रतियोगी वातावरण का सृजन हो रहा है, नए-नए उत्पाद और सेवाएं परिचालन में आ रही हैं। ऐसे में बैंकों को चाहिए कि वे ग्राहक सेवा के स्तर को ऊंचा उठाने के लिए अग्रलिखित सुझावों पर विशेष ध्यान दें-

* बैंकों को समय-समय पर ग्राहकों की आवश्यकताओं, अपेक्षाओं के बारे में सर्वेक्षण कराते रहना चाहिए और अपने तंत्र के माध्यम से विस्तृत सूचना एकत्रित कराते रहना चाहिए ताकि ग्राहक की आवश्यकतानुसार उत्पादों एवं सेवाओं में सुधार एवं परिष्कार किया जा सके।

* बैंक परिसर में अनिवार्य सुविधाओं जैसे पेयजल, बैठने की व्यवस्था, जलपान का प्रबंध, समाचार पत्र, बैंकिंग संबंधी पत्रिकाओं, टेलीफोन इत्यादि की उपलब्धता सुनिश्चित करनी चाहिए ताकि ग्राहक को बैंक की किसी सेवा संचालन में यदि विलंब भी हो रहा हो तो वह सुविधापूर्वक अपना समय व्यतीत कर सके।

* शिष्ट एवं शालीन तथा व्यवहार कुशल स्टाफ की नियुक्ति तथा ग्राहक सेवा के विविध पहलुओं पर स्टाफ को गहन प्रशिक्षण प्रदान करना ताकि स्टाफ ग्राहकों को अत्युत्तम सेवा प्रदान करने में सक्षम हो सकें। विशेषकर ग्रामीण बैंकों में कार्यरत स्टाफ को ग्राहक सेवा प्रशिक्षण की नितांत

आवश्यकता है।

* शिकायत निवारण का प्रभावी तंत्र स्थापित किया जाना चाहिए क्योंकि कई बार ग्राहकों की शिकायतें छोटी-छोटी आशंकाओं/दुविधाओं के कारण पनपती हैं जिनका त्वरित निपटारा ग्राहकों के साथ संबंध को और अधिक प्रगाढ़ बना देता है।

* ग्राहक मित्र स्टाफ की नियुक्ति बैंक की सभी शहरी एवं ग्रामीण शाखाओं में अनिवार्यतः करना। ग्राहक मित्र काउंटर पर बैंकों की ग्राहक संबंधी सभी जिज्ञासाओं के समाधान के लिए जानकारी उपलब्ध होनी चाहिए अर्थात ग्राहक मित्र को स्थानीय, राष्ट्रीय एवं अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर हो रही बैंकिंग हलचलों/नीतियों इत्यादि की अद्यतन जानकारी होनी चाहिए।

* ग्राहकों से विपणन के लिए संपर्क करते समय ग्राहकों की सुविधा का ध्यान रखना विशेषकर जिन सेवाओं को बाह्य संस्थाओं द्वारा आउटसोर्स करवाया जा रहा है उन्हें बैंक की ग्राहक सेवा संबंधी नीति एवं दृष्टिकोण से परिचित कराना। इसी तरह प्रत्यक्ष बिक्री दलालों के बारे में भी बैंक को एक सुस्पष्ट एवं ग्राहकोन्मुख नीति लागू करनी चाहिए ताकि ग्राहकों को किसी प्रकार की अनावश्यक परेशानी का सामना नहीं करना पड़े।

* ग्राहक के प्रश्नों अथवा शिकायत पत्रों का शीघ्रातिशीघ्र निवारण करना। बैंकों को चाहिए कि वे ग्राहकों द्वारा भेजे गये किसी भी पत्र की तुरंत पावती सूचना भेजें जिसमें ग्राहक को यह आश्वासन दिया गया हो कि उसके पत्र का शीघ्रातिशीघ्र निस्तारण किया जाएगा। इसी तरह ग्राहकों की शिकायत दूर होने पर बैंक द्वारा ग्राहकों को धन्यवाद पत्र भेजा जाना चाहिए। ऐसे ही ऋण अस्वीकृति की दशा में ग्राहक को पत्र लिखकर कारणों का उल्लेख किया जाए क्योंकि ऐसी छोटी-छोटी बातें ग्राहक सेवा के मानवीय पक्ष को बहुत ऊंचा उठाती हैं और ग्राहक को संतुष्टि प्रदान करती हैं। यह जरूरी है कि बैंक ग्राहक से किए जाने वाले पत्राचार में अनौपचारिक, आत्मीय एवं मृदु भाषा का प्रयोग करें ताकि ग्राहक बैंक से अपने संबंध का अनुभव कर सके।

* प्रतिस्पर्धात्मक युग के बावजूद बैंकों को केवल व्यावसायिक लाभप्रदता के लिए कार्य नहीं करना चाहिए। उनके द्वारा समाज के लिए किए गए कुछ सेवाभावी कार्य आम जनता के मन में बैंक की छवि को उज्ज्वल बना देते हैं। कुछ कार्यों से बैंकों को कोई लाभ नहीं होता है जैसे-नोट बदली काउंटर की स्थापना किन्तु इनका प्रभावी संचालन ग्राहक की मानसिकता पर सकारात्मक प्रभाव छोड़ता है।

* बैंक स्टाफ को समझना होगा कि तकनीकी युग के बावजूद बैंक का ग्राहक एक मशीन न होकर मानव है जिसकी भावनाएं होती हैं इसलिए किसी भी स्थिति में ग्राहक को उपेक्षित न मानकर उसके साथ मानवीय व्यवहार करना चाहिए। बैंक स्टाफ को ग्राहक के लिए मुस्कान सहित सेवा के सिद्धांत का पालन करना चाहिए।

* बैंकों को अपनी प्रौद्योगिकीय सेवाओं यथा इंटरनेट बैंकिंग, एटीएम, मोबाइल बैंकिंग, स्मार्ट कार्ड बैंकिंग इत्यादि का अधिकाधिक प्रसार करना चाहिए। साथ ही इन तकनीकी सुविधाओं के संचालन में ग्राहक धन की सुरक्षा का विशेष ध्यान रखने हेतु इन सेवाओं को हैकिंग/वाइरस प्रूफ बनाना चाहिए।

* यह नितांत जरूरी है कि बैंक अपनी सेवाएं/उत्पाद उचित मूल्य पर प्रभारित करें क्योंकि हमारे देश की बहुत बड़ी आबादी आज भी बैंकिंग सुविधाओं से वंचित हैं तथा उनके लिए लक्षित सेवाओं एवं उत्पादों पर शुल्क या प्रभार कम किया जाना चाहिए तथा सामान्य ग्राहकों के लिए भी शुल्क नीति का तर्कसंगत एवं ग्राहकोन्मुखी होना जरूरी है।

* ग्राहक सेवा प्रबंधन में ग्राहक शिक्षा को महत्व देना चाहिए क्योंकि बैंक स्टाफ तभी ग्राहकों को उचित उत्पाद एवं सेवाएं प्रदान कर सकेगा जब वह ग्राहक की अपेक्षाओं को भली-भांति जानता एवं समझता हो। इसके लिए बैंक स्टाफ को विशेष ज्ञान, रुचि एवं प्रशिक्षण की आवश्यकता है

ताकि वह सूचना प्रौद्योगिकी (ग्राहक डाटाबेस) की सहायता से ग्राहक की अभिमुखता को समझ सके। प्रत्येक बैंक को अपनी सेवाओं एवं उत्पादों का ग्राहक चार्टर तैयार करना चाहिए जिससे ग्राहकों को अपनी आवश्यकतानुरूप सेवा या उत्पाद चुनने में कठिनाई न हो।

* बैंकों को ग्राहक के साथ अपने संबंधों को प्रगाढ़ करने के लिए ग्राहक से जुड़ी महत्वपूर्ण तिथियों जैसे जन्मदिन, विवाह तिथि, सेवानिवृत्ति इत्यादि पर शुभकामना संदेश भेजना चाहिए क्योंकि इससे ग्राहक को मिलने वाली आत्म-संतुष्टि का कोई मूल्य नहीं होता है। इसी तरह बैंक के निष्ठावान ग्राहकों को जो कि लंबे अरसे से बैंक के साथ जुड़े हैं, उन्हें विशिष्ट अवसरों जैसे कि बैंक की स्थापना तिथि इत्यादि अवसरों पर सम्मानित करना अथवा किसी समारोह में आमंत्रित करना इत्यादि भी ग्राहक के मन में बैंक की छवि को सुन्दर बनाता है।

* बैंकों को चाहिए कि वे अपनी सभी शाखाओं में सीबीएस तथा एकल खिड़की प्रणाली के माध्यम से कार्य करें क्योंकि इससे कार्य शीघ्रता से होगा तथा ग्राहक सेवा का स्तर ऊंचा होगा। इसी तरह बैंक को अपनी एटीएम मशीनों को ऐसे स्थानों पर स्थापित करना चाहिए जहां बैंक शाखाएं नहीं हैं। इसी तरह बैंक स्मार्ट कार्ड प्रौद्योगिकी के सदुपयोग द्वारा अपनी सेवाएं एवं उत्पादों को दूरस्थ स्थानों में रहने वाले ग्राहकों तक पहुंचा सकते हैं।

* वित्तीय समावेशन (Financial Inclusion) के लिए तत्पर एवं अग्रगामी नीतियां बनाना जैसे- बैंक नीतियों एवं उत्पादों संबंधी सूचनाओं का स्थानीय भाषा में उपलब्ध होना, 'नो-फ्रिल्स' खाते खोलना, निर्धन ग्राहकों को शून्य अथवा कम बैलेन्स पर खाता संचालन की अनुमति देना एवं उनको वित्तीय सेवाओं व उत्पादों की जानकारी प्रदान करना, बिजनेस कोरेस्पोंडेंट मॉडल इत्यादि का प्रयोग कर अब तक बैंकिंग सुविधाओं से वंचित रहे जनसमूह को बैंकिंग के दायरे में लाना।

निष्कर्ष के तौर पर कहा जा सकता है कि अच्छी और कारगर ग्राहक सेवा के लिए बैंकों को संवेदनशील होना होगा। ग्राहक सेवा न केवल बैंक की व्यावसायिक लाभप्रदता के लिए जरूरी है बल्कि आज के प्रतिस्पर्धात्मक युग में यह बैंक के अस्तित्व के लिए एक अनिवार्यता बन चुकी है। कुशल ग्राहक सेवा स्टाफ एवं सफल ग्राहक सेवा नीतियों के बगैर कोई बैंक बाज़ार में अपना आधार तैयार नहीं कर सकता और न ही टिक सकता है। अब जबकि वर्तमान ग्राहक में जागरुकता एवं जानकारी पहले से कहीं अधिक बढ़ी है, बैंक प्रबंधन के लिए यह नितांत जरूरी हो चुका है कि वे ग्राहक सेवा विशेषज्ञों के माध्यम से सही ग्राहक सेवा नीतियां अपनाएं ताकि बैंक ग्राहक को अधिक सुचारु, त्वरित व त्रुटिरहित सेवा प्रदान कर सके। आज के युग में जहां वैश्विक आर्थिक नीतियों ने व्यावसायिक प्रतिस्पर्धा को स्थानीय से अंतरराष्ट्रीय स्वरूप प्रदान कर दिया है, कोई भी संस्था ग्राहकों को नजरअंदाज करके बाज़ार में अपना अस्तित्व बनाए नहीं रख सकती है। अधिकतम ग्राहक संतुष्टि को ध्यान में रखकर व उचित उत्पाद विकसित करके एवं सही ग्राहक सेवा नीतियों को क्रियान्वित करके ही बैंक अपने पुराने ग्राहक को अपने साथ जोड़े रखकर तथा नए ग्राहक बनाकर अपना व्यवसायिक आधार बनाए रख सकते हैं जैसा कि टोनी एलेक्जेन्ड्रा ने कहा है- **'किसी उत्पाद की कीमत एवं गुणवत्ता आपको प्रतिस्पर्धा के खेल में उतारती है किंतु प्रतिस्पर्धा के इस खेल में विजय केवल बेहतर ग्राहक सेवा के कारण ही हो सकती है।'**

♦

ग्राहकों की अपेक्षाएं हमारे दायित्व हैं

ग्रामीण क्षेत्र को प्रदत्त कृषि ऋणों में बैंकों का योगदान

● डॉ. नरेन्द्र पाल सिंह
रीडर, वाणिज्य संकाय
साहू जैन कॉलेज, नज़ीबाबाद

भारतीय अर्थव्यवस्था कृषि पर आधारित है और आर्थिक विकास की ओर अग्रसर होते हुए भी यहां गरीबों की संख्या विश्व में सर्वाधिक है। आजादी के बाद से देश का संतुलित विकास करने के लिए तथा भारतीय अर्थव्यवस्था को आत्मनिर्भर बनाने के लिए सरकार ने पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से आर्थिक विकास की नीति को अपनाया है। हमारे देश की जनसंख्या जो वर्ष 1951 में 36.11 करोड़ थी वह बढ़कर वर्ष 2001 में 102.7 करोड़ पहुंच गयी है। ग्रामीण क्षेत्र में निवास करने वाली आबादी में यदि देखा जाए तो वर्ष 1951 में 82.7 प्रतिशत जनसंख्या अर्थात 29.9 करोड़ लोग ग्रामीण क्षेत्र में वास करते थे जबकि 2001 की जनगणना में 72.2 प्रतिशत जनसंख्या अर्थात 74.17 करोड़ जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्र में रह रही है अतः लोगों का रुझान लगातार शहरी क्षेत्र की ओर बढ़ रहा है। कुल जनसंख्या का 26 प्रतिशत लोग गरीबी की रेखा से नीचे निवास कर रहे हैं जिनमें दो-तिहाई ग्रामीण क्षेत्रों में तथा एक-तिहाई शहरी क्षेत्रों में रहते हैं अतः हमारी अर्थव्यवस्था कृषि और अनुषंगी गतिविधियों के विकास में बैंकों ने जो योगदान दिया है वह भारतीय बैंकिंग में एक महत्वपूर्ण तथा क्रांतिकारी परिवर्तन है। बैंकों के राष्ट्रीयकरण से पूर्व चूंकि बैंक निजी क्षेत्र में थे अतः कृषि ऋण में भागीदारी नगण्य थी और सकल राष्ट्रीय उत्पादन में कृषि का करीब 50 प्रतिशत हिस्सा था फिर भी कृषि क्षेत्र बैंक ऋण से उपेक्षित रहा। बैंकों के राष्ट्रीयकरण के पीछे एक कारण यह भी था कि राष्ट्रीयकरण के बाद देश के संपूर्ण विकास हेतु बैंकों द्वारा ऋण प्रदान करने की प्राथमिकतायें निश्चित की गईं। राष्ट्रीयकरण के बाद प्रमुख वाणिज्यिक बैंकों ने अपनी ऋण संबंधी नीतियों को ग्रामीण जनता की आवश्यकताओं के अनुरूप ढाला है। इस कार्य के पीछे रिज़र्व बैंक और भारत सरकार का सफल संचालन एवं मार्गदर्शन रहा है। बैंकों द्वारा संस्थागत गारंटी की व्यवस्था शुरू कर, कृषि की वित्त व्यवस्था में जोखिमों को घटाया गया है साथ ही कृषि कार्यों के लिए कुल ऋणों का 18 प्रतिशत हिस्सा सुनिश्चित किया गया और कम से कम लागत पर अधिकाधिक ऋण ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले कमज़ोर वर्गों को उपलब्ध कराये गये हैं। राष्ट्रीयकरण के बाद बैंकों ने इस दिशा में बखूबी कार्य किया और देश के कृषि क्षेत्र के विकास में भरपूर सहयोग दिया है किंतु आज बैंक प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों को प्रदत्त ऋण में कृषि क्षेत्र को निर्धारीत 18 प्रतिशत का लक्ष्य प्राप्त नहीं कर पा रहे हैं, परिणामस्वरूप कृषि उत्पादन में कमी आयी है तथा देश सकल राष्ट्रीय उत्पादन के निर्धारित प्रतिमानों को प्राप्त करने में असफल हो रहा है अतः बैंकों को देश एवं सार्वजनिक हित में कृषि ऋणों को बढ़ाना होगा।

हमारे देश में विभिन्न प्रयासों के होते हुए भी अभी तक अधिकांश जनसंख्या बैंकिंग से नहीं जुड़ पायी है। आज भी प्रति सौ वयस्क व्यक्ति बैंक जमा खातों की संख्या मात्र 59 है जबकि इंग्लैंड में 94 प्रतिशत लोगों के खाते बैंक में खुले हुए हैं। गांव में तो स्थिति और भी संकटमय है क्योंकि प्रत्येक एक हज़ार लोगों पर मात्र 135 जमा खाते हैं अर्थात 13.5 प्रतिशत लोगों का ही बैंकों से संपर्क है और 82 प्रतिशत लोग ऐसे हैं जिनका बैंक में कोई खाता नहीं है। आज भी कुल ग्रामीण ऋण का अधिकांश भाग अनौपचारिक स्त्रोतों से अर्थात साहूकारों, महाजनों आदि से लिया जाता है जो कि आज के समय में खतरे का संकेत है। किसानों को मिलने वाले कुल कर्ज का 26 प्रतिशत ऋण महाजन साहूकार देते हैं जबकि बैंकों से 36 प्रतिशत ऋण ही मिलता है। आधे से अधिक किसानों को खेती की जरूरतों को पूरा करने के लिए कहीं न कहीं से ऋण लेना पड़ता है। ऋण अपने आप में बुरे नहीं होते हैं, उनका उपयोग ही ऋण को अच्छा या बुरा बना देता है। एक ओर जहां ऋण के उचित उपयोग से खुशहाली आती है वहीं दूसरी ओर उसके दुरुपयोग से व्यक्ति दिवालिया हो जाता है। हमारे देश में भी लगभग आधे किसान कर्ज से दबे हुए हैं। किसानों द्वारा यदि ऋण का उपयोग निर्धारित उद्देश्यों के लिए

नहीं किया जाता है तथा कृषि विकास के नाम पर ऋण लेकर वह कृषि पर खर्च न कर शादी-विवाह, फिजूलखर्ची अथवा अनुत्पादक कार्यों पर खर्च कर दिया जाता है और ऋण की अदायगी समय पर नहीं हो पाती है तो ऐसा ऋण हानिकारक हो जाता है।

कृषि ऋण एवं बैंकों की स्थिति

सरकार एवं भारतीय रिज़र्व बैंक की नीति के अंतर्गत कृषि ऋण, राष्ट्रीय कृषि ग्रामीण बैंक, कृषि वित्त निगम, वाणिज्यिक बैंक, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, भूमि विकास बैंक तथा सहकारी बैंक प्रदान कर रहे हैं अतः बैंक किसानों को सही समय पर ऋण एवं मार्गदर्शन देकर उनके विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। सरकार एवं भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा वर्ष 1991-92 के बाद बैंकिंग सुधार कार्यक्रम लागू किये गये हैं और बैंकिंग क्षेत्र में नयी-नयी अवधारणाओं को भी लागू किया गया है। बैंकों में उदारीकरण एवं निजीकरण की अवधारणा के चलते बैंकों में आपसी प्रतिस्पर्धा होने लगी है और बैंकों का भी उद्देश्य परिवर्तित होकर लाभार्जन की ओर हो गया है। बैंक, ग्रामीण क्षेत्रों में ऋण प्रदान करने एवं उसकी वसूली में काफी समय एवं पैसा लगने के कारण, कृषि ऋणों को देने से बचने लगे हैं। कृषि ऋणों में लागतें स्वाभाविक रूप से बढ़ जाती है और इसी कारण ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि ऋण का क्षेत्र अलाभकारी समझा जाने लगा है जहां सरकार एवं भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा बैंकों में निर्धारित अपने शुद्ध ऋण का 18 प्रतिशत, कृषि ऋण का क्षेत्र निर्धारित किया गया था वहीं सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों द्वारा यह प्रतिशत 31 मार्च 2008 तक 17.40 तक ही पहुंच पाया है अतः ये बैंक अपने निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर पाये।

कृषि हेतु संस्थागत ऋण प्रवाह

आज राष्ट्रीयकृत बैंकों का अधिकांश व्यापार ग्रामीण क्षेत्रों में फैला हुआ है जबकि अधिकांश ऋण डुबने की संभावना भी ग्रामीण क्षेत्रों में ही होती है और इन बैंकों को प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र में अपने समग्र ऋण का 40 प्रतिशत तक ऋण प्रदान करना होता है। कृषि कार्य हेतु संस्थागत ऋण प्रवाह पर यदि दृष्टिपात करें तो वर्ष 2000-01 में सहकारी बैंकों की हिस्सेदारी 39 प्रतिशत थी जिसमें लगातार गिरावट आ रही है, जो घटकर वर्ष 2006-07 में 19.4 प्रतिशत तक आ गयी है। इन बैंकों के पास आधारभूत ढांचे, प्रशिक्षित स्टाफ एवं नवीनतम सूचना प्रौद्योगिकी का आज भी अभाव है। जबकि क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक अपनी हिस्सेदारी में स्थिरता बनाये हुए हैं। जहां तक वाणिज्यिक बैंकों का सवाल है ये बैंक कृषि क्षेत्र में ऋण प्रदान करने में सक्रिय रूप से भागीदारी कर रहे हैं। वर्ष 2000-01 में वाणिज्यिक बैंकों ने कृषि हेतु संस्थागत ऋण प्रवाह में 53 प्रतिशत हिस्सेदारी निभायी जो बढ़कर वर्ष 2007-08 में 69.6 प्रतिशत तक पहुंच गयी है। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की लगभग 80 प्रतिशत से भी अधिक शाखाएं ग्रामीण क्षेत्र में खोली गयी हैं जो किसानों को कृषि ऋण प्रदान कर रही हैं, जबकि वाणिज्यिक बैंकों द्वारा लगभग 48 प्रतिशत शाखाएं ग्रामीण क्षेत्रों में, 22 प्रतिशत अर्द्धशहरी क्षेत्रों में तथा लगभग 30 प्रतिशत शाखाएं शहरी एवं महानगरीय क्षेत्रों में खोली हैं जिनके द्वारा वर्ष 2007-08 के अन्त तक 69.6 प्रतिशत संस्थागत ऋण कृषि कार्य हेतु प्रदान किये हैं। वाणिज्यिक बैंकों के अंतर्गत पुराने निजी क्षेत्र के बैंकों ने मात्र 18.2 प्रतिशत शाखायें 30 जून 2008 तक ग्रामीण क्षेत्र में खोली हैं जबकि राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा 34.9 प्रतिशत शाखायें ग्रामीण क्षेत्र में और मात्र 21.1 प्रतिशत शाखायें महानगरों में खोली हैं। निजी क्षेत्र के नये बैंकों द्वारा 36 प्रतिशत शाखायें महानगरीय क्षेत्र में तथा मात्र 6.3 प्रतिशत शाखाएं ग्रामीण क्षेत्र में खोलकर अपने व्यापार को बढ़ाया है अतः सरकार एवं भारतीय रिज़र्व बैंक को चाहिए कि वह निजी क्षेत्र के बैंकों के लिए भी ग्रामीण क्षेत्र के व्यवसाय हेतु एक सीमा अवश्य निश्चित करें तीकि ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि ऋणों में हो रही कमी एक सीमा तक छुटकारा पाया जा सके।

बैंकों द्वारा प्रदत्त कृषि ऋणों में कमी के कारण

भारत एक कृषि प्रधान देश है और यहां कि अधिकांश जनसंख्या कृषि तथा उससे संबंधित व्यवसायों से जुड़ी है अतः यदि हमे देश का आर्थिक विकास करना है तो कृषि का विकास अनिवार्य रूप से करना होगा तभी हम अधिक से अधिक लोगों को रोज़गार के अवसर प्रदान कर सकेंगे। कृषि क्षेत्र के विकास के लिए वित्त की आवश्यकता समय-समय पर होती रहती है जिसका

कृषि हेतु संस्थागत ऋण प्रवाह तालिका

संस्था/बैंक का नाम	2000-01	2001-02	2002-03	2003-04	2004-05	2005-06	2006-07	2007-08
सहकारी बैंक	20800 (39.0)	23604 (38.0)	23716 (34.0)	26959 (31.0)	31424 (25.1)	39404 (21.8)	42480 (18.5)	43684 (19.4)
क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक	4220 (8.0)	4854 (8.0)	6070 (9.0)	7581 (9.0)	12404 (9.9)	15223 (8.4)	20435 (8.9)	24814 (11.0)
वाणिज्यिक बैंक	27807 (33.0)	33587 (54.0)	39774 (57.0)	52441 (60.0)	81481 (65.0)	125859 (69.8)	166485 (72.6)	156850 (69.6)
कुल	52827 (100)	62045 (100)	69560 (100)	86981 (100)	125309 (100)	180486 (100)	229400 (100)	225348 (100)

सर्वश्रेष्ठ माध्यम बैंक हो सकते हैं क्योंकि इन बैंकों की शाखाओं का जाल पूरे देश में फैला हुआ है। जब से बैंकिंग सुधार की प्रक्रिया को लागू किया गया बैंकों ने अपने लाभ के बारे में सोचना शुरू कर दिया और प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र के अंतर्गत कृषि ऋणों के लक्ष्यों को प्राप्त करने में ढील कर दी है। फिलहाल बैंकों द्वारा ग्रामीण क्षेत्र में प्रदत्त कृषि ऋण में कमी के निम्न कारण दिखयी देते हैं:-

* ग्रामीण क्षेत्र में प्रदत्त कृषि ऋणों की लागत शहरी क्षेत्रों में प्रदत्त व्यावसायिक एवं खुदरा ऋणों की तुलना में ऊंची होती है अतः बैंक कृषि ऋण प्रदान करने से बचते हैं।

* ग्रामीण क्षेत्रों में बैंक की शाखायें दूर-दूर स्थित होने के कारण बैंक कर्मचारियों एवं अधिकारियों को ऋण खातों के पर्यवेक्षण में समस्यायें आती है तथा ऋण खातों के उचित पर्यवेक्षण में अभाव अकसर ऋण डूब जाता है और बैंक भविष्य में इन ऋणों के प्रति अपनी रूचि नहीं दिखाते।

* वर्तमान में बैंकों का उद्देश्य परिवर्तित होकर लाभ कमाने की ओर हो गया है जबकि ग्रामीण शाखायें बैंक द्वारा निर्धारित प्रमाणों को पूरा नहीं कर पाती अतः ऐसी शाखाओं का संविलियन अथवा एकीकरण लाभ में चल रही शाखाओं के साथ किया जा रहा है जिससे कृषि ऋणों में कमी दर्ज की गयी है।

* ग्रामीण क्षेत्रों में किसान बैंकों से ऋण प्राप्त करते समय प्रतिभूति एवं जमानत देने में असमर्थता महसूस करते हैं क्योंकि किसानों के पास गिरवी रखने हेतु प्रतिभूतियों का अभाव रहता है या फिर उनके दस्तावेज़ किसी और व्यक्ति के नाम अथवा पास होते हैं और किसान ग्रामीण परिवेश में, बैंकों में प्रतिभूति गिरवी रखना अपनी प्रतिष्ठा एवं मर्यादा के अनुकूल भी नहीं समझते जबकि बैंक प्रतिभूति एवं जमानत के अभाव में ऋणों को स्वीकृत नहीं कर पाते।

* हमारे देश में ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि हेतु अधिकांश ऋण लिये जाते हैं किंतु ग्रामीण लोग इस ऋण को कृषि कार्यों में प्रयोग न कर अनुत्पादक कार्यों जैसे विवाह, जन्म एवं मृत्यु, मुकदमेबाजी आदि कार्यों में लगा देते हैं और वे समय से ऋण की अदायगी नहीं कर पाते अतः बैंक उन्हें ऋण स्वीकृत करने में असमर्थता प्रकट करते हैं।

* ग्रामीण क्षेत्रों में कृषकों में ऋणग्रस्तता का कारण कम आय व निर्धनता, पैतृक ऋण, प्राकृतिक संकट, सामाजिक व्यय, पशुओं आदि की मृत्यु, साहूकारों की कुरीतियों, जनसंख्या में वृद्धि आदि हैं अतः बैंक ग्रामीण क्षेत्रों में पहले से ही व्याप्त ऋणग्रस्तता को देखकर कृषि क्षेत्र के ऋणों को स्वीकृत करने से कतराते हैं।

* बैंकों द्वारा गैर निष्पादक आस्तियों की अवधारणा लागू होने

से बैंक के अधिकारियों, कर्मचारियों के उत्तरदायित्व में वृद्धि हो गयी है अतः ऋण स्वीकृति में ये अधिकारी एवं कर्मचारी शिथिलता बरतते हैं। परिणामस्वरूप कृषि क्षेत्र में प्रदत्त ऋणों में कमी दर्ज की जा रही है।

* बैंक ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि ऋण प्रदान करते समय यह भी ध्यान रखने लगा है कि कृषि ऋणों की स्वीकृति एक सीमा के अंतर्गत ही की जाये क्योंकि इससे बैंक के जोखिमों में वृद्धि हो जायेगी और लाभप्रदता भी प्रभावित होगी।

* बैंकों में कार्यरत अधिकारी एवं कर्मचारी अधिकांश शहरी वातावरण से आते हैं और नियुक्ति के बाद भी वह पास के शहरी क्षेत्र में ही रहना पसंद करते हैं अतः ग्रामीण बैंक शाखाओं में रहकर भी वह ग्रामीणों से परिचित नहीं हो पाते और न ही उनकी सही आवश्यकताओं का आकलन कर पाते हैं अतः कृषि ऋणों के प्रति उनका रुझान भी कम हो जाता है और न तो सही पात्रों का चयन हो पाता है और न ही प्रभावी वसूली निष्पादकता।

* बैंकों द्वारा आज भी निर्धन वर्ग को कम ब्याज दर पर कृषि ऋण स्वीकृत नहीं किये जाते क्योंकि जनसंख्या वृद्धि एवं भूमि के विभाजन से अधिकांश ग्रामीण सीमांत किसानों की श्रेणी में आ गये हैं जो बैंक से ऊंची ब्याज दर पर रुपया प्राप्त करने में डरते हैं।

* बैंकों में, ग्रामीण किसानों के अनपढ़ होने के कारण, कृषि ऋणों में आये दिन धोखाधड़ी एवं जालसाजी के मामले पाये जाते हैं अतः कृषक इनकी वजह से भी ऋण लेने में संकोच करते हैं साथ ही ऋण प्राप्ति में कागज़ी कार्रवाई की अधिकता होने से भी किसान हतोत्साहित होते हैं।

* ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि ऋणों की स्वीकृति के समय प्रयुक्त दस्तावेज़ों पर स्टाम्प लगाने होते हैं अतः कुछ राज्यों में स्टाम्प शुल्क की दरें इतनी अधिक है कि बैंकों के चाहते हुए भी किसान कृषि ऋण बैंकों से स्वीकृत नहीं कर पाते।

* किसानों द्वारा जब बैंकों से कृषि ऋण स्वीकृत कराया जाता है तो उसमें प्रतिभूति के रूप में भूमि के कागजात, जो कि तहसील से निर्गत होते हैं, रखे जाते हैं अतः किसानों द्वारा तहसील से जोतबही, खसरा, खतौनी आदि लेने में तहसील कर्मचारी इतना समय लगा देते हैं तथा साथ ही सुविधाशुल्क भी वसूलते हैं, कि किसान तंग आकर कृषि ऋण का विचार ही त्याग देता है परिणामस्वरूप बैंकों के कृषि ऋण में कमी दिखाई देने लगती है।

बैंकों द्वारा ग्रामीण क्षेत्र में कृषि ऋण बढ़ाने के उपाय

सरकार द्वारा कृषि के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने हेतु भरसक प्रयास किये जा रहे हैं तथा ग्रामीण एवं कृषि विकास हेतु विभिन्न योजनाओं को बैंकों के माध्यम से लागू कराया जा रहा है। बैंकों द्वारा प्रदत्त कृषि ऋणों के लक्ष्य को निर्धारित किया गया है एवं उन्हें प्राप्त करने हेतु पुरजोर कोशिश की जा रही है। वैसे तो यदि देखा जाये तो बैंकों द्वारा प्रदत्त कृषि ऋण में लागत एवं जोखिम दोनों ही अधिक है किंतु देश एवं सामाजिक विकास के सामने उनको नज़रअंदाज करना होगा और बैंकों को सतर्कता बरतनी होगी। बैंकों को कृषि क्षेत्र के ऋणों को बढ़ाने के लिए कृषि की प्रत्येक गतिविधि के लिए ऋण स्वीकृत करने होंगे। वर्तमान सामाजिक परिस्थितियों एवं लक्ष्यों को ध्यान में रखकर सरकार, भारतीय रिज़र्व बैंक एवं सभी बैंकों को कृषि क्षेत्र में ऋणों की स्थिति को सुधारने हेतु निम्न प्रयास करने होंगेः

* विगत वर्षों में बैंकों द्वारा व्यावसायिक एवं मकानों के लिए प्रदत्त ऋणों पर ब्याज की दरें बड़े कृषि ऋणों की अपेक्षा कम रखी गयी है अतः बैंकों को चाहिए कि बड़े कृषि ऋणों पर ब्याज की दर घटाकर कृषि ऋणों को प्रोत्साहित करें।

* भारतीय रिज़र्व बैंक एवं सरकार को सकल राष्ट्रीय उत्पादन में कृषि का योगदान देखते हुए वर्तमान कृषि ऋणों के लक्ष्य को 18 प्रतिशत से बढ़ाकर 30 प्रतिशत तक कर देना चाहिए।

* भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा कृषि ऋण के क्षेत्र में गैर निष्पादक आस्तियों की अवधारणा को लागू किया गया है अतः कृषि

क्षेत्र के लिए इन नियमों में ढील दी जानी चाहिए क्योंकि हमारी कृषि, मानसून, एवं प्रकृति पर निर्भर है और देश में कहीं न कहीं प्राकृतिक आपदा आती रहती है जिससे फसलें नष्ट हो जाने से किसान अपने ऋणों की चुकौती समय से नहीं कर पाता।

* बैंकों ने कृषि ऋण प्रदान करने हेतु किसानों को किसान क्रेडिट कार्ड निर्गत किये हैं अतः बैंकों को चाहिए कि सभी पात्र किसानों का निर्धारित लक्ष्यों के अनुरूप कार्ड वितरित करें ताकि किसान समयानुसार ऋण का उपयोग कर पूरा फायदा उठा सके। बेहतर होगा यदि किसानों को किसान क्रेडिट कार्ड के साथ एटीएम की सुविधा भी प्रदान कर दी जाये जिससे किसानों का समय बचेगा और वे कृषि में अधिक कार्य कर सकेंगे।

* कृषि ऋणों के अंतर्गत बैंकों को कृषि उत्पादन के भंडारण हेतु भी ऋण प्रदान करने चाहिए क्योंकि जब फसल आती है तो बाज़ार में उसके दामों में कमी हो जाती है और किसानों को भंडारण के अभाव में फसल को तुरन्त बेचना उनकी मजबूरी बन जाती है अतः फल, सब्जियों एवं अनाज को रखने हेतु कोल्ड स्टोरेज बनाने के लिए ऋण दिये जाने चाहिए ताकि ग्रामीण उसका फायदा उठा सकें।

* सरकार द्वारा लागू कृषि स्नातकों हेतु विभिन्न योजनाओं के तहत बैंकों को ऋण स्वीकृत करने चाहिए क्योंकि ये युवा कृषि स्नातक, कृषि में आने वाली समस्याओं हेतु नये-नये तरीके सुझाकर कृषि क्षेत्र में क्रांति पैदा कर सकते हैं अतः जगह-जगह पर कृषि सेवा केंद्र खोलकर ये स्नातक ग्रामीणों को कृषि क्षेत्र में हो रहे तकनीकी परिवर्तनों की जानकारी दे सकते हैं। बैंकों द्वारा ऋण प्रदान करने की इस क्षेत्र में काफी गुंजाइश अभी भी विद्यमान है।

* गरीब लोगों को आत्मनिर्भर बनाने हेतु सरकार द्वारा स्वयं सहायता समूह की अवधारणा को लागू किया है अतः बैंक इन समूहों को ऋण प्रदान कर उनके उत्पादन वृद्धि में योगदान कर रहे हैं और इन समूहों की वसूली निष्पादकता भी सराहनीय रही है अतः बैंकों को चाहिए कि कृषि ऋण प्रदान करने हेतु कृषि क्षेत्र में भी ऐसे समूहों को प्राथमिकता के आधार पर ऋण प्रदान कर लक्ष्यों को प्राप्त किया जाये।

* सरकार आजकल डेरी विकास योजनाओं को भी प्रोत्साहित कर रही है क्योंकि कृषि कार्य में लगे किसानों के पास चारा भरपूर मात्रा में होता है और यदि वह कृषि के साथ-साथ डेरी उद्योग को भी अपनाये तो काफी लाभ होगा। बैंक इस क्षेत्र में ऋण प्रत्यक्ष रूप से कृषकों को या डेरी संगठनों के माध्यम से वितरित कर सकते हैं, इसमें जोखिम की सम्भावना भी कम रहती है।

* बैंक, कृषि कार्यों में प्रयुक्त उपकरणों एवं यंत्रों हेतु ऋण डीलरों के माध्यम से भी प्रदान कर सकते हैं।

* बैंकों द्वारा गैर-परंपरागत कृषि गतिविधियों जैसे अनुपयोगी एवं बंजर भूमि को कृषि योग्य एवं उपयोगी बनाने हेतु, सिंचाई सुविधाओं में वृद्धि, बागबानी, मधुमक्खी पालन, सुअर पालन, तालाब खोदने, पाताल तोड़ कुएं बनवाने आदि के लिए ऋण प्रदान कर कृषि ऋणों में वृद्धि की जा सकती है।

* कृषि ऋणों की स्वीकृति के समय बैंक, किसानों से प्रतिभूति गिरवी रखते हैं और काफी किसान इसकी वजह से ऋण प्राप्ति में असफल रहते हैं। अतः बैंकों को चाहिए कि प्रतिभूति लेने की ऋण सीमा में वृद्धि करें।

* बड़े कृषि ऋणों के लिए दस्तावेज़ों पर बैंक द्वारा स्टाम्प शुल्क लिया जाता है जो कि सभी राज्यों में अलग-अलग दर पर लगाया जाता है। केंद्र सरकार एवं बैंकों को चाहिए कि कृषि ऋणों हेतु स्टाम्प शुल्क पूरे देश में समाप्त करें क्योंकि ऋण को तीन साल में नवीनीकरण करने पर पुनः स्टाम्प शुल्क की आवश्यकता होती है अतः इसे समाप्त कर ही बैंकों द्वारा प्रदत्त कृषि ऋणों में वृद्धि की जा सकती है।

* बैंकों को चाहिए कि यदि कृषक कृषि ऋणों हेतु कृषि भूमि के अतिरिक्त अन्य सम्पत्ति गिरवी रखना चाहे या अन्य

ऋणों हेतु कृषि भूमि गिरवी रखना चाहें, तो उसे भी स्वीकार करे और अपने कृषि ऋणों में वृद्धि करे।

* राज्य सरकार एवं तहसील प्रशासन को चाहिए कि वह कृषि बैंक ऋणों की वसूली में पर्याप्त सहयोग करे ताकि बैंक कृषि ऋणों के प्रति हतोत्साहित न हो।

* बैंकों द्वारा अपने कृषि ऋणों में वृद्धि हेतु अपने कर्मचारियों एवं अधिकारियों को प्रशिक्षित कर, ग्राहक सेवा के प्रति भी ध्यान केंद्रित किया जाना चाहिए। ऋण वसूली निष्पादकता के प्रति पूर्ण सतर्कता बरती जाये, साथ ही यह भी ध्यान रखा जाये कि कृषि ऋण, कृषि कार्यों हेतु ही प्रयोग किया गया अथवा नहीं।

* बैंक अपने कृषि ऋणों में वृद्धि तभी कर पायेंगे जब प्रत्येक बैंक, शाखा स्तर पर कृषि ऋण अनुभाग की अलग स्थापना कर उनके लक्ष्यों को निर्धारित करे तथा समय-समय पर कृषि ऋण प्रणाली की समीक्षा की जाये जिसमें किसानों की सहभागिता भी सुनिश्चित की जाये।

* बैंक कृषि ऋणों में प्रोत्साहन तथा कृषकों को शोषण से बचाने हेतु ग्रामीण क्षेत्रों में साहूकारों व महाजनों द्वारा प्रदत्त कृषि ऋणों पर सरकार द्वारा प्रतिबंध लगाया जाना चाहिए।

भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था के बदलते परिदृश्य में बैंकों को अपनी कार्यप्रणाली एवं उद्देश्यों में परिवर्तन करने की आवश्यकता है। वैसे तो आज भारतीय बैंकिंग का रुझान भारतीय अर्थव्यवस्था के कृषि क्षेत्र की ओर स्वतः ही है किंतु इसमें और अधिक सार्थक प्रयासों की आवश्यकता है। बैंकों को कृषि क्षेत्र की आवश्यकताओं के अनुरूप अपनी कार्यपद्धति में परिवर्तन करना होगा। कृषि ऋण खातों में पैसा डूबने में यदि स्वीकृत ऋण सुविधा किसी षडयंत्र की उपज है तो वह एक आपराधिक कृत्य माना जाना चाहिए और दोषी लोगों के खिलाफ कानूनी कार्यवाही अवश्य ही सुनिश्चित की जानी चाहिए। अर्थव्यवस्था की आर्थिक वृद्धि एवं विकास दर का संबंध बैंक कृषि ऋणों से सीधा-सीधा जुड़ा है, आवश्यकता इस बात की है कि उदार ऋण नीति का लाभ सभी किसानों को मिलना चाहिए। अतः बैंकों को यह सुनिश्चित करना होगा कि देश के कृषि विकास हेतु कृषि क्षेत्र को प्रदत्त ऋणों की मात्रा एवं वसूली निष्पादकता बढ़ानी होगी और नियमों में ढील प्रदान करनी होगी किंतु यह कार्य बैंकों को पूर्ण सतर्कता के साथ करना होगा तभी बैंक तथा सरकार अपने कृषि ऋणों के निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने में सफल हो सकेंगे। ♦

कृषि में सकल पूंजी निर्माण

(1999-2000 की कीमतों पर)

वर्ष	कृषि और संबद्ध कार्यकलापों में निवेश (करोड़ रुपये)			सकल निवेश में कृषि एवं संबद्ध कार्यकलापों का हिस्सा (प्रतिशत)		सकल पूंजी सृजन/ कृषि संबंधी सकल देशी उत्पाद (स्थिर कीमतों पर प्रतिशत)	कृषि में निवेश (स्थिर कीमतों पर सकल देशी उत्पाद का प्रतिशत)
	कुल	सरकारी	निजी	सरकारी	निजी		
1999-00	50,151	8,670	41,481	17.3	82.7	11.2	2.8
2003-04	53,542	10,805	42,737	20.2	79.8	11.1	2.4
2004-05	57,849	13,019	44,830	22.5	77.5	12.0	2.4
2005-06	66,065	15,947	50,118	24.1	75.9	12.9	2.5
2006-07	73,285	18,755	54,530	25.6	74.4	13.8	2.6
2007-08	79,328	22,107	57,221	27.9	72.1	14.2	2.5

स्रोतः रिज़र्व बैंक की वार्षिक रिपोर्ट-2008-09 से साभार।

बीमा विपणन और बैंक

● डॉ. सुबोध कुमार
रीडर, हे.न.ब. गढ़वाल
विश्वविद्यालय,टिहरी,गढ़वाल

गांधीजी ने कहा था, 'ग्राहक हमारे परिसर में सबसे महत्वपूर्ण व्यक्ति है। वह हम पर निर्भर नहीं है अपितु हम उस पर आश्रित हैं।' गांधीजी का यह कथन केवल आदर्श वाक्य था और सैद्धान्तिक दृष्टिकोण रहा। संरक्षित अर्थव्यवस्था के युग में यह अवधारणा व्यवहार के धरातल का स्पर्श न कर सकी। किन्तु, उदारीकरण के प्रभाव के रूप में बाज़ारीकृत अर्थव्यवस्था में यह विचार मूर्त रूप लेने लगा। प्रतिस्पर्धा ने ग्राहक को उसका अधिकार दिलाने का रास्ता सरल बना दिया। उपभोक्ता हित संरक्षण का जो कार्य विविध कानूनों का प्रयोजन रहा, वह बाज़ार में उत्पन्न प्रतिस्पर्धा ने आसानी से सुनिश्चित करना प्रारम्भ कर दिया। यही कारण है कि डाक विभाग ने अपनी स्पीड पोस्ट सेवा की कीमत पर पुनर्विचार किया और स्थानीय स्पीड पोस्ट का मूल्य बाईस रुपये से घटाकर बारह रुपये कर दिया। एक फोन सेवा कम्पनी जो रियायत अपने ग्राहक को दे रही है, दूसरी कम्पनियों को भी अपने उपभोक्ता को वह सुविधा देनी ही होगी। नियामक संस्थायें भी सतत प्रयासरत हैं कि विभिन्न शुल्क दरों में कमी कर उपभोक्ता को लाभ पहुंचाया जाये। क्रेता की स्थिति मजबूत हुई है। वर्तमान बाज़ार 'क्रेता बाज़ार' है।

सेवागुणवत्ता स्तर और परिवाद निवारण प्रणाली

जीवन बीमा पॉलिसी के पीछे प्रमुख आकर्षण रहता है- आयकर में छूट। निवेशक प्रायः वित्तीय वर्ष के अन्त में पॉलिसी लेते हैं और प्रीमियम की रसीद उन्हें अपने आयकर विवरण में संलग्न करनी होती है। निजी बीमा कम्पनियां तुरन्त उसी दिन दूर-दराज तक के ग्राहक को फैक्स से प्रीमियम की रसीद उपलब्ध करा देती है क्योंकि उनका वितरण तन्त्र इतना विस्तृत नहीं है कि सब जगह के ग्राहकों को मूल रसीद तुरन्त दे सकें। बैंक बीमा प्रीमियम की रसीद देने में कई दिन ले रहे हैं, जिसके लिये ग्राहक को बैंक जाना पड़ता है। यदि सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों ने अपनी सेवागुणवत्ता में परिष्कार नहीं किया तो इसका फायदा निजी बीमा कम्पनियों को अवश्य मिलेगा क्योंकि ग्राहक सुविधा की तलाश में है। निजी कम्पनियों का नेटवर्क अभी ग्रामीण और दूरस्थ अंचलों में नहीं है। वितरण माध्यमों की तलाश चल रही है। नये विकल्प विकसित हो रहे हैं। भारती एक्सा ने एअरटेल के साथ करार किया है कि उनके नेटवर्क पर भारती एक्सा जीवन बीमा पॉलिसियों की जानकारी उपलब्ध रहेगी और एअरटेल के सभी 650 रिलेशनशिप सेन्टर्स पर कम्पनी के बीमा उत्पाद विक्रय किये जायेंगे। इसी प्रकार अवीवा जीवन बीमा का भारतीय डाकघरों से समझौता हो गया है कि अवीवा जीवन बीमा योजनायें डाकघरों के माध्यम से बेची जायेंगी। बीमा सेवाओं के सदर्भ में ग्राहक हित संरक्षण के लिये बैंक पर उत्तरदायित्व अधिक है। बीमा उत्पाद भारतीय समाज में अभी बहुत लोकप्रिय नहीं बन सके हैं। इसलिये बीमा संबंधी नियम और क्रियाविधि अथवा रीतियों की यथेष्ठ जानकारी अभी उपभोक्ता को नहीं है। अतः बीमा विक्रेता की भूमिका अधिक विस्तृत हो जाती है। जीवन बीमा संविदा प्रायः लम्बी अवधि की संविदा होती है। यदि बैंक जीवन बीमा पॉलिसी का विपणन कर रहे हैं तो बैंक को पॉलिसी विक्रय के बाद यह सुनिश्चित करना होगा कि बीमा अवधि पर्यंत ग्राहक हित उपेक्षित न हों और पॉलिसी के दौरान अथवा परिपक्वता पर अथवा दावे की स्थिति में बीमेदार को वांछित सेवा और सहयोग मिलता रहे।

बैंकएश्योरेंस के अंतर्गत जारी बीमा पॉलिसियों के मामले में शिकायत तन्त्र को बहुत मजबूत बनाये जाने की जरूरत है। ऐसी पॉलिसियों में काफी बड़ी संख्या में शिकायतों का मिलना सम्भावित है क्योंकि बीमा उत्पाद जटिल होते हैं, दीर्घकालिक होते हैं और बीमा उत्पादों में वैविध्य है, जैसे- **बन्दोबस्ती**, समूह योजना, मीयादी बीमा, दुर्घटना बीमा, **खालिस बीमा**। उदारीकरण के परिणामस्वरूप ग्राहक चरित्र में बदलाव आया है। अब ग्राहक संकोची नहीं रहा अपितु दृढ़ता से अपना पक्ष रखता है। यहां उल्लेखनीय है कि शिकायत के लिये प्रयुक्त पारम्परिक माध्यमों के अतिरिक्त अब विविध व्यवसायों में नियामक संस्थायें और लोकपाल विवादों के समाधान के लिये कार्यरत हैं। इन सबके अतिरिक्त टीवी चैनल भी ग्राहकों की शिकायत सुनने और

मध्यस्थता का कार्य कर रहे हैं। जी बिजनैस और सीएनबीसी आवाज का उदाहरण दिया जा सकता है। विक्रयकर्ता की एक चूक को टीवी चैनल पर प्रसारित हो रहे कार्यक्रम के माध्यम से लाखों लोग सुनेंगे। किसी भी सेवाप्रदाता के लिये यह बहुत संकटपूर्ण स्थिति होगी और इसका प्रतिकूल प्रभाव उसके व्यवसाय पर पड़ेगा। टीवी चैनल का माध्यम किसी व्यवसाय अथवा व्यवसायी के लिये विज्ञापन और प्रचार का सशक्त माध्यम भी हो सकता है। विज्ञापन आवश्यकता और मांग उत्पन्न करने का सामर्थ्य रखता है। बीमा में ग्राहक शिक्षा के लिये बीमा कम्पनियां टीवी चैनल के माध्यम से बहुत प्रभावपूर्ण भूमिका ढूंढ़ सकती हैं। असंतुष्ट ग्राहक किसी भी व्यवसायी के लिये बड़ा संकट है क्योंकि जिस प्रकार संतुष्ट ग्राहक श्रेष्ठ विज्ञापन माना जाता है उसी प्रकार असंतुष्ट ग्राहक स्वयं तो जाता ही है साथ में कुछ और वर्तमान और भविष्य के ग्राहकों को साथ ले जाता है।

बैंककृत बीमा पॉलिसी और ग्राहक प्रोफाइल

बीमा संवेदनापरक विषय है। परिवार का प्रधान अपने पाल्य के सम्मुख बीमा संबंधी जरूरतों और आर्थिक सुरक्षा प्रबंधन के बारे में प्रायः सहजता से बात करने में भी समर्थ नहीं होते हैं। वहीं संकोचशील आश्रित अपने पिता अथवा अभिभावक से उनकी जीवन बीमा पॉलिसियों का विवरण नहीं मालूम करते। यद्यपि निवेश संबंधी सूचनायें परस्पर बाँटना सरल है किन्तु जहां बीमा शामिल होता है वहां जीवन-मृत्यु का विषय जुड़ जाता है और वातावरण भावनात्मक बन जाता है। थोड़ी कठिन परिस्थिति है कि अनुबन्धकर्ता के न रहने पर बीमा कम्पनी के दायित्व का उदय होगा और उत्तराधिकारियों के पास सम्यक जानकारी नहीं है। भावनात्मक और क्रियात्मक घटकों के चलते यह सम्भावना प्रबल रहती है कि हितग्राही को यह जानकारी ही न हो कि उसे बीमा राशि मिलनी है। ऐसी दशा में यदि बैंक यह देख लें कि उसके खातेदार के पास कोई बीमा पॉलिसी भी है जो बैंक ने उसे बेची हो। यद्यपि बैंक की यह कानूनन जिम्मेदारी नहीं हो सकती लेकिन श्रेष्ठ **व्यावसायिक नैतिक मर्यादा** के अंतर्गत बैंकर अपनी भूमिका स्वीकार कर ले तो बीमा का मूल प्रयोजन पूरा हो जायेगा और श्रेष्ठ व्यावसायिक व्यवहार मानदण्ड स्थापित होंगे। इसके लिये एक उपकरण बन सकता है- ग्राहक प्रोफाइल। ग्राहक प्रोफाइल में बैंक द्वारा जारी बीमा पॉलिसी का भी विवरण दर्ज कर लिया जाये तथा ग्राहक प्रोफाइल को समय-समय पर **अद्यतन** करते रहा जाये। साथ ही, अवसर पर ग्राहक प्रोफाइल का उपयोग किया जाये। ग्राहक का वैयक्तिक विवरण रखने के बारे में हमारे बैंकों की आलोचना की गई है जबकि विदेशी बैंकों में ग्राहक प्रोफाइल रखने का अच्छा चलन है।

पासबुक पर बीमा विषयक टिप्पणी

ऐसी पॉलिसियों जहां बीमा बैंक द्वारा किया गया है, के विषय में सुझाव मिला है कि पॉलिसी का उल्लेख पासबुक पर कर दिया जाये। वास्तव में, यह प्रयोग बहुत प्रभावी और फलप्रद हो सकता है। कुछ बैंक नामांकन संबंधी टिप्पणी पासबुक पर करते हैं। इससे बैंक और ग्राहक दोनों पक्षकारों को समय पर बहुत सुविधा होती है। नामांकिती को अपने अधिकार को ज्ञापित करना बहुत आसान हो जाता है। साथ ही, बैंक को साक्ष्य के लिये प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती। इसी प्रकार, पासबुक पर खाते से संबद्ध बीमा पॉलिसी का उल्लेख दावेदार के लिये उपयोगी रहेगा। इसके अलावा, बीमाधारक के लिए भी पॉलिसी के प्रीमियम अदायगी आदि के विषय में अनुस्मारक और **त्वरित संदर्भ** का काम करेगा। यद्यपि इस प्रकार की बीमा पॉलिसी के प्रीमियम के लिये बैंक **स्थायी अनुदेश** प्राप्त करके रखते हैं, तथापि व्यवहार में उदाहरण मिल जाते हैं कि बीमेदार को खाते से प्रीमियम काटने के लिये बैंक को स्मरण कराना पड़ता है। पासबुक पर दर्ज बीमा पॉलिसी का विवरण बैंक, बीमित और दावेदार तीनों पक्षों के लिये उपयोगी सिद्ध होगा। अप्रत्यक्ष रूप से यह टिप्पणी विज्ञापन माध्यम के रूप में भी काम करेगी।

स्वतंत्र वित्तीय सलाहकार परामर्श दे रहे हैं कि छोटे शहरों और कस्बों में ग्राहक नई बीमा कम्पनियों से बीमा न करायें अपितु भारतीय जीवन बीमा निगम का ही आश्रय लें क्योंकि नई बीमा कम्पनियों के कार्यालय अभी केवल बड़े शहरों तक सीमित हैं। अतः बीमा अवधि में होने वाली किसी आवश्यकता अथवा असुविधा की दशा में सेवा प्राप्त कर पाना कठिन होगा। इसी प्रकार दावे की दशा में दावेदारों को अत्यधिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा। इस प्रकार के उदाहरण व्यवहार में देखने को मिलने लगे हैं। बैंकों को इस आरोप से मुक्ति के उपाय अवश्य ही प्रारम्भ कर देने चाहिए। इसका सकारात्मक प्रभाव

बैंकिंग और बीमा व्यवसाय दोनों पर पड़ेगा अन्यथा हानि भी दोगुनी होगी। इस कार्य में बैंक और बीमा कम्पनी के मध्य अत्यधिक समन्वय और सामंजस्य की जरूरत होगी। यहां बीमा अभिकर्ता की भूमिका बहुत अहम हो जाती है जिसे बैंक में 'स्पैसीफाइड पर्सन' संज्ञा दी गई है।

बीमा प्रस्ताव की रसीद एवं बीमा प्रमाणपत्र

बैंकों में हो रहे बीमा अनुबंधों के मामले में अनुभव सिद्ध है कि वहां बीमा प्रस्ताव प्राप्त होने की रसीद और बीमा प्रमाणपत्र दोनों ही धारक को वितरित नहीं हो रहे हैं अपितु बैंक की शाखा की रिकार्ड फाइल में रखे मिल रहे हैं। उपभोक्ता के लिये यह स्थिति बहुत संकटकारी है और इससे बीमा का प्रयोजन ही निष्फल हो जायेगा। वस्तुतः यह बीमा कराना लाभार्थी के लिये बेकार रहेगा जब तक उन्हें तत्संबंधी कोई कागज न मिले जिससे उन्हें मालूम हो कि दिवंगत ने कोई बीमा पॉलिसी बैंक से ली हुई थी। साथ ही, बैंक के स्तर पर यह सेवा में न्यूनता का मामला है और बैंक को इसके लिये जवाबदेह माना जायेगा। दोनों ही प्रमाणकों के लिये ग्राहक को बैंक से स्वयं बार-बार जानकारी लेनी होती है और मांगना पड़ता है, तब ही उन्हें प्रस्ताव की रसीद अथवा बीमा प्रमाणपत्र मिलता है। इसके पीछे व्यावहारिक कारण भी है कि बीमा प्रस्ताव और बीमा प्रमाणपत्र बैंक द्वारा अवश्य प्राप्त किये जाते हैं किंतु इस पर कार्यवाही और स्वीकृति बीमा कम्पनी के कार्यालय में होती है जो कि एक दूसरी संगठन इकाई है। प्रस्ताव जमा होने की रसीद अथवा बीमा प्रमाणपत्र बीमेदार के घर ही भेजा जाना चाहिए, जो कि नहीं भेजा जा रहा है। इससे बीमेदार के आवासीय पते का सत्यापन भी स्वतः हो जायेगा। समूह बीमा के मामले में बीमेदार को व्यक्तिगत पॉलिसी नहीं जारी होती अपितु बीमा प्रमाण पत्र निर्गत होता है। बैंकों द्वारा अपने खातेदार ग्राहक समूह का बीमा किया जाता है जिसमें सीमित राशि का बीमा होता है किन्तु किसी स्वास्थ्य परीक्षण की आवश्यकता नहीं होती। एक निजी बीमा कम्पनी द्वारा निर्गत पॉलिसी बॉण्ड के कवर पर मुद्रित देखने को मिला- 'इस दस्तावेज को अपने पास संभालकर सुरक्षित रखें।' बहुत सार्थक पहल लगती है, बीमा प्रमाण पत्र के साथ भी इस प्रकार की टिप्पणी अवश्य ही उपयोगी सिद्ध होगी। बीमेदार का हित चिन्तन बीमा व्यवसाय के लिये भी लाभप्रद है और उपभोक्ता संरक्षण की मान्यताओं और अपेक्षाओं को पूरा करने में भी सहायक होगा।

बीमा प्रस्ताव प्राप्त होने के बाद जोखिम का चयन हो जाये तब बीमादाता की ओर से फोन अथवा एसएमएस के जरिए तुरन्त आवेदक को सूचित किया जाना चाहिए कि उसका बीमा हो गया और पॉलिसी नम्बर बताया जाना चाहिए। निजी जीवन बीमा कम्पनियों ने फोन पर बीमा के प्रयोग प्रारम्भ कर दिये हैं। मारुति इंश्योरेंस अपने ग्राहकों को घर बैठे अपनी गाड़ी का बीमा कराने की सुविधा देता है। मारुति का नेशनल इंश्योरेंस के साथ करार है। ग्राहक फोन पर अपना चेक नम्बर बताये और सेवादाता थोड़ी देर में पॉलिसी नम्बर सूचित कर देता है। बाद में, प्रस्तावकर्ता चेक भेज देता है और चेक मिलने पर पॉलिसी प्रेषित कर दी जाती है।

पूर्ण प्रकटन नियम बनाम क्रेता सावधान नियम

बीमा क्षेत्र की विडम्बना है कि बीमादाता ने 450 रुपये में एक वर्ष की जोखिम सुरक्षा ग्राहक को दी। इसके लिये औपचारिकता मात्र इतनी कि बैंक अधिकारी ने एक बार फॉर्म पर दो हस्ताक्षर कराये और बाकी कॉलम पूछ कर भर दिये। एक सिटिंग और पांच मिनट का समय, वह भी जब ग्राहक अपने रुटीन लेन-देन करने बैंक आया। उसे पता नहीं कि उसे क्या दिया गया और क्या मिला। उसे बताया नहीं गया, बताया जाना चाहिए था। एलआईसी के फॉर्म में घोषणा है कि स्कीम के बारे में शर्तें और विशेषतायें एजेण्ट ने समझा दी हैं। यहां स्पैसीफाइड पर्सन के द्वारा समझाया जाना था। व्यावसायिक नैतिक मर्यादा की दृष्टि से यह भी सेवा में न्यूनता मानी जायेगी। बीमा का प्रमुख सिद्धांत है - परम सद्विश्वास का सिद्धांत, जिसके अंतर्गत महत्वपूर्ण नियम है, '**पूर्ण प्रकटन का नियम**'। प्रकटन के नियम के तहत बीमादाता और प्रस्तावकर्ता दोनों को संविदा से संबंधित महत्वपूर्ण तथ्य एक दूसरे के समक्ष प्रकट कर देने चाहिए। बीमादाता पर यह दायित्व है कि बीमा पॉलिसी के प्रस्तावकर्ता के लिये उपयुक्तता, स्कीम के गुणदोष आदि न पूछे जाने पर भी व्यक्त कर दे, अन्यथा बीमादाता की ओर से गम्भीर चूक मानी जायेगी और परिणाम होगा बीमा संविदा का व्यर्थ होना। महत्वपूर्ण बात है कि बीमा अनुबन्धों में '**क्रेता सावधान नियम**' लागू नहीं होता अपितु विक्रेता को पूर्ण प्रकटन करना होता है। इसी प्रकार बीमेदार पर दायित्व है कि वह अपने जीवन और उससे संबंधित महत्वपूर्ण बातों को प्रकट कर दे

अन्यथा किसी भी प्रकार के मिथ्यावर्णन, तथ्यगोपन आदि की दशा में बीमा संविदा शून्य हो जाती है। बैंक अगर अपनी परामर्शदाता की भूमिका स्वीकार करें तब परिवाद नियंत्रण कहीं बेहतर हो सकेगा और अधिक विक्रय सुगम हो जायेगा। परामर्शदाता की भूमिका व्यवसाय के सभी पक्षकारों के लिये लाभदायी है। साथ ही, इससे उपभोक्ता संरक्षण के निर्धारित दायित्व का भी निर्वहन बखूबी हो सकता है।

बैंकिंग विपणन बनाम बीमा विपणन

बैंकिंग विपणन	बीमा विपणन
सरल और व्यक्त लाभ	जटिल और गूढ़ लाभ
अनुबंध अधिनियम की व्यवस्थायें भी	बीमा अधिनियम की व्यवस्थायें
क्रेता सावधान नियम	पूर्ण प्रकटन नियम
सामान्य विश्वास पर्याप्त	परम सद्विश्वास का सिद्धांत
साधारण मनोवैज्ञानिक तत्व	भावनाओं और संवेदनाओं का सम्मिलन
सामान्य विपणन और विज्ञापन उपाय अपेक्षित	आग्रह और व्यक्तिगत परामर्श वांछित
जीवनकाल के विषय	जीवन के बाद प्रयोजन
अल्पकालिक अनुबन्ध	दीर्घकालीन और जीवन पर्यंत संविदायें
ब्याज और मूल्यवर्धन लाभ केंद्रित लेन-देन	जोखिम और केंद्रित सौदे

समूह जीवन बीमा बनाम व्यक्तिगत जीवन बीमा

समूह जीवन बीमा	व्यक्तिगत जीवन बीमा
बीमादाता और समूह प्रमुख के बीच संविदा	बीमादाता और बीमेदार के मध्य संविदा
मास्टर पॉलिसी का निर्गमन, तदनन्तर बीमा प्रमाणपत्र का निर्गमन	व्यक्तिगत बीमा पॉलिसी बॉण्ड निर्गमन
स्वास्थ्य परीक्षण की आवश्यकता नहीं	प्रायः स्वास्थ्य परीक्षण अनिवार्य
पूरे समूह वर्ग के लिये समरूप प्रीमियम दर	प्रस्तावकर्ता की आयु पर आधारित प्रीमियम दर
पूरे समूह के लिये अनिवार्य अथवा जागरुकता और स्वप्रेरणा जन्य	व्यक्तिगत आग्रह और परामर्श पर निर्भर
आयु वर्ग हेतु जन्मतिथि प्रमाणक पर्याप्त	निजी स्वास्थ्य और परिवार संबंधी विस्तृत सूचनायें
अनुबन्ध का प्राथमिक साक्ष्य-प्रस्ताव प्राप्ति बीमा प्रमाणपत्र	प्रथम प्रीमियम रसीद, बीमा पॉलिसी रसीद,

प्रयुक्त शब्दावली

क्रेता सावधान नियम	Caveat Emptor Rule	व्यावसायिक नैतिक मर्यादा	Business Ethics
स्थायी अनुदेश	Standing Instructions	अद्यतन	Up to date
खालिस बीमा	Pure Insurance	त्वरित संदर्भ	Ready reference
बन्दोबस्ती पॉलिसी	Endowment Policy	पूर्ण प्रकटन का नियम	Law of full Disclosure

पुरस्कृत निबंध

जीवन स्तर के सुधार में माइक्रो-फाइनांस की भूमिका *

● तपन कुमार प्रधान
सहायक महाप्रबंधक
भारतीय रिज़र्व बैंक
आंचलिक प्रशिक्षण केंद्र
बेलापुर, नई मुंबई

माइक्रो फाइनांस क्या है?

भारतीय रिज़र्व बैंक तथा नाबार्ड के अनुसार माइक्रो-फाइनांस 'ग्रामीण, अर्ध-शहरी तथा शहरी इलाकों में स्थित गरीबों को दी जाने वाली बचत, जमा, ऋण इत्यादि ऐसी वित्तीय सेवाएं हैं जिनमें लेन-देन की राशि बहुत ही छोटी-छोटी रकम की हों।'

माइक्रो फाइनांस के दो पहलू हैं: माइक्रोक्रेडिट (व्यष्टि ऋण या सूक्ष्म ऋण) तथा माइक्रो सेविंग (व्यष्टि जमा या सूक्ष्म जमा)। यद्यपि माइक्रो फाइनांस के दायरे में सूक्ष्म जमा तथा सूक्ष्म बीमा आदि वित्तीय सेवाएं भी सम्मिलित हैं, आम तौर पर माइक्रो फाइनांस को हम व्यष्टि ऋण ही समझते हैं। सामान्यतः माइक्रो फाइनांस में दी जाने वाली ऋणराशि 100 से 150 डालर अर्थात ज्यादा से ज्यादा चार से पांच हजार रुपये तक होती है तथा ऐसे ऋणों के लिए कोई बंधक या मोर्टगेज की आवश्यकता नहीं पड़ती।

> वर्ष 1997 में वाशिंगटन में आयोजित 'विश्व व्यष्टि-ऋण शीर्ष सम्मेलन' में माइक्रो फाइनांस को कुछ इस तरह परिभाषित किया गया: 'यह गरीब लोगों के स्व-रोज़गार के लिए दी जाने वाली ऐसी छोटी-छोटी ऋण-राशियां हैं जिन्हें छोटे-छोटे प्रकल्पों में निवेश करके गरीब, परिवार का परिपोषण कर सकता है'।

वर्ष 1997 में वाशिंगटन में आयोजित 'विश्व व्यष्टि-ऋण शीर्ष सम्मेलन' में माइक्रो फाइनेंस को कुछ इस तरह परिभाषित किया गया: 'यह गरीब लोगों के स्व-रोज़गार के लिए दी जाने वाली ऐसी छोटी-छोटी ऋण-राशियां हैं जिन्हें छोटे-छोटे प्रकल्पों में निवेश करके गरीब, परिवार का परिपोषण कर सकता है'। सामान्यतः व्यष्टि ऋण अत्यधिक गरीब लोगों को दिया जाता है, जिनके पास बैंकों से ऋण पाने के बदले गिरवी रखने के लिए कुछ भी नहीं होता है। अतः ऐसे ऋण अक्सर किसी व्यक्ति विशेष को नहीं बल्कि 10-15 व्यक्तियों के समूहों को दिए जाते हैं। समूह की तरफ से बैंक या वित्तसंस्था को सामूहिक गारंटी दी जाती है। इस सामूहिक गारंटी के कारण माइक्रो-फाइनांस में ऋण की वापसी दर बेहतर होती है।

एक विश्व आंदोलन

यद्यपि दुनियाभर में माइक्रो-फाइनांस का विस्तार 1970 के बाद ही हुआ है, इससे बहुत पहले 1864 में जर्मनी के फ्रीड्रीश विल्हेम के द्वारा ग्रामीण बैंकिंग आंदोलन शुरू हुआ था तथा वर्ष 1900 में कनाडा में आल्फोन्स देजादा द्वारा गरीबों के लिए सूक्ष्म ऋण की पहल की गयी थी। भारत में भी उन्नीसवीं सदी में विश्वकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर द्वारा बंगाल में गरीब किसानों के लिए आसान ऋण उपलब्ध कराने हेतु कुछ कदम उठाए गये थे। पर 1976 में बांग्लादेश में डॉ. मोहम्मद यूनुस द्वारा स्थापित ग्रामीण बैंक की अभूतपूर्व सफलता के बाद माइक्रो-फाइनांस ने एक विश्वव्यापी आंदोलन का रूप ले लिया।

आज से 25-30 वर्ष पहले माइक्रो-फाइनांस की अवधारणा बिलकुल अनजानी सी थी, जबकि दुनियाभर में 100 से ज्यादा देशों में 1.2 अरब गरीब लोगों को सूक्ष्म-ऋण प्राप्त है। ना केवल विकासशील राष्ट्रों, बल्कि इंग्लैंड, अमेरिका जैसे विकसित राष्ट्र भी आज गरीबी उन्मूलन के लिए माइक्रो-फाइनांस को अपना रहे हैं।

ग्रामीण बैंक की क्रांति

माइक्रो-फाइनांस के क्षेत्र में बांग्लादेश का ग्रामीण बैंक एक

* भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा आयोजित सरकारी क्षेत्र के बैंकों के लिए अंतर बैंक निबंध प्रतियोगिता, वर्ष 2007-08 में क्षेत्र 'ग' में प्रथम पुरस्कार प्राप्त निबंध। पत्रिका के अनुरूप संपादित।

क्रांति लाया है। इस बैंक के उधारकर्ताओं में 97 प्रतिशत महिलाएं हैं और ऋण वसूली का अनुपात है 98.85 प्रतिशत जो एक विश्व रिकार्ड है। बैंक की 2226 शाखाएं 71,371 गांवों को सूक्ष्म ऋण प्रदान कर रही हैं। इस बैंक के 18,795 कर्मचारी हर सप्ताह 66 लाख उधारकर्ताओं को उनके घर जाकर सेवा मुहैया कराते हैं।

ग्रामीण बैंक कभी भी चक्रवृद्धि ब्याज वसूल नहीं करता। ऋण चुकौती की समय-सारणी इस प्रकार बनायी जाती है कि वह उधारकर्ता की आमदनी चक्र के साथ तालमेल रखती हो। ऋण परिशोधन की राशि छोटी-छोटी आसान साप्ताहिक किस्तों में बांटी जाती है। किसी भी हाल में मूलधन से ज्यादा ब्याज नहीं लिया जाता है और उधारकर्ता की मृत्यु के बाद उसके परिवार से बची हुई राशि वसूल नहीं की जाती है बल्कि यह राशि ऋण बीमा पालिसी से वसूली जाती है।

गांवों के गरीब किसान और अनपढ़ महिलाएं माइक्रो-फाइनांस के जरिये केवल स्वावलंबी ही नहीं बन सकते, अपितु बैंकों तथा व्यष्टि-ऋण संस्थानों को प्रचुर मुनाफ़ा भी दिला सकते हैं, यह दुनिया में सबसे पहले बांग्लादेश ग्रामीण बैंक ने ही साबित कर दिखाया है। आज ग्रामीण बैंक का माइक्रो-फाइनांस मॉडल दुनिया भर के 100 से भी ज्यादा देशों में अपनाया गया है और हर जगह इससे प्रभूत सफलता मिल रही है।

भारत में प्रसार

भारत में माइक्रो-फाइनांस का प्रसार 1974-75 में शुरू हुआ, जब MYRADA और PRADAN जैसी गैर-सरकारी संस्थाओं ने स्वयं सहायता समूहों के जरिये गरीबों को व्यष्टि ऋण उपलब्ध कराना शुरू किया। 1990 के बाद व्यष्टि-वित्त संस्थाओं के जरिये गरीबों को ऋण उपलब्ध होने लगा। फिलहाल भारत में माइक्रो-फाइनांस के दो मॉडल हैं : 1. नाबार्ड का स्वयं सहायता समूह मॉडल तथा 2. ग्रामीण बैंक मॉडल पर आधारित माइक्रो-फाइनांस संस्थान (MFI) मॉडल। स्वयं सहायता मॉडल में 570 बैंकों द्वारा चार करोड़ से भी ज्यादा परिवारों को सूक्ष्म-ऋण दिया जा रहा है, जबकि ग्रामीण बैंक मॉडल में 800 से ज्यादा गैर-सरकारी संस्थाएं 73 लाख परिवारों को ऋण पहुंचा रही हैं।

मार्च 2007 तक भारत में पांच करोड़ से भी ज्यादा लोगों को करीब 15,000 करोड़ रुपये का व्यष्टि-ऋण उपलब्ध कराया गया, जिसकी वापसी दर लगभग शत प्रतिशत रही। इससे जाहिर है कि भारत में माइक्रो-फाइनांस एक जन-आंदोलन का रूप लेने में समर्थ है, क्योंकि इससे पहले कभी भी देश में इतने बड़े पैमाने और इतनी अच्छी वापसी दर के साथ गरीबों के लिए कोई बैंकिंग सुविधा उपलब्ध नहीं करायी गयी थी।

स्वयं सहायता समूह-नाबार्ड की पहल

1992 में 500 स्वयं सहायता समूहों को बैंक के साथ सहबद्धता के जरिये सूक्ष्म ऋण दिला कर राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक ने जो पहल की थी, आज उससे भारत में 29 लाख से भी ज्यादा स्वयं-सहायता समूहों को प्रत्यक्ष रूप से लाभ मिल रहा है। यह आज दुनिया भर में किसी भी संस्था द्वारा सबसे बड़ा माइक्रो-फाइनांस अभियान है, जिससे 570 बैंक, 35,000 बैंक शाखाएं, 3,000 गैर-सरकारी संस्थाएं तथा हजारों किसान क्लब जुड़े हुए हैं।

स्वयं सहायता समूह 20 से कम (सामान्यतः 10 से 15) गरीब व्यक्तियों को लेकर बना ऐसा एक स्वैच्छिक प्रयास है, जिसमें हर सदस्य की छोटी-छोटी जमा राशि इकट्ठा करके एक लाभदायक कारोबार या उद्यम शुरू किया जाता है। सामान्यतः ऐसे समूहों का गठन तथा संचालन किसी गैर-सरकारी संस्था (NGO) की देखरेख में होता है। सदस्यों की सामूहिक गारंटी के आधार पर बैंक उन्हें व्यष्टि-ऋण देते हैं, जो कि समूह की कुल जमा-पूंजी से कई गुना ज्यादा होता है।

गरीबों के लिए वरदान

माइक्रो-फाइनांस की विशेषता यह है कि इसे समाज के सबसे निचले तबके के गरीबों के लिए ही बनाया गया है, और इसका सबसे ज्यादा प्रसार दुनिया के गरीब से गरीब राष्ट्र तथा पिछड़े इलाकों में ही हो रहा है। दुनिया की सबसे बड़ी व्यष्टि-वित्त संस्थाएं बांग्लादेश, भारत, इंडोनेशिया तथा थाईलैंड में कार्यरत

हैं। बांग्लादेश के ग्रामीण बैंक आशा और ब्रेक जैसी संस्थाएं 40 से 50 लाख लोगों को व्यष्टि ऋण दे रही हैं, जबकि इंडोनेशिया का रक्यात बैंक अकेले 33 लाख लोगों को सूक्ष्म-ऋण प्रदान कर रहा हैं। भारत में शेयर तथा स्पंदन जैसी व्यष्टि वित्त संस्थाएं 15 लाख से भी ज्यादा गरीबों को माइक्रो-फाइनांस पहुंचा रही हैं।

गरीबों को साहूकारों के ऋणजाल से बचाना माइक्रो-फाइनांस की सबसे बड़ी उपलब्धि है। गांवों में साहूकारों की ब्याज दर प्रति माह 10% से भी ज्यादा होती है, जबकि माइक्रो-फाइनांस में यह ब्याज दर सामान्यतः 2% से कम होती है। इंग्लैंड जैसे विकसित देशों में भी साहूकारों से ऋण लेकर लाखों लोग गरीबी-चक्र में फंस चुके हैं, जिनके लिए माइक्रो-फाइनांस आज एक नई आशा लेकर आया है। श्रीलंका में डॉ. किरिवंदनिया द्वारा 1978 में शुरू किया गया 'सानसा' नामक सूक्ष्म वित्त आंदोलन पिछले दो दशकों में वहां के 25% से ज्यादा गरीबों को गरीबी रेखा के ऊपर ला पाया है।

दुनियाभर में जिन 15 करोड़ लोगों ने व्यष्टि वित्त संस्थानों से उधार लिए हैं, उनमें से 85 प्रतिशत महिलाएं ही हैं और इनमें से 98 प्रतिशत से भी ज्यादा महिलाएं अपनी ऋण-राशि ब्याज के साथ वापस करने में कामयाब रही हैं। नाबार्ड के अनुसार भारत में करीब तीन करोड़ महिलाओं ने सूक्ष्म ऋण योजनाओं का लाभ उठाकर 22 लाख छोटे-छोटे व्यवसाय शुरू किए हैं।

महिलाओं का सशक्तिकरण

माइक्रो-फाइनांस का सबसे बड़ा योगदान रहा है महिलाओं को स्व-रोजगारक्षम तथा आत्मनिर्भर बनाने में। पिछले दशक (1997-2006) के दौरान दुनियाभर में जिन 15 करोड़ लोगों ने व्यष्टि वित्त संस्थानों से उधार लिए हैं, उनमें से 85 प्रतिशत महिलाएं ही हैं और इनमें से 98 प्रतिशत से भी ज्यादा महिलाएं अपनी ऋण-राशि ब्याज के साथ वापस करने में कामयाब रही हैं। नाबार्ड के अनुसार भारत में करीब तीन करोड़ महिलाओं ने सूक्ष्म ऋण योजनाओं का लाभ उठाकर 22 लाख छोटे-छोटे व्यवसाय शुरू किए हैं। भारत के 29 लाख स्वयं-सहायता समूहों के 90 प्रतिशत सदस्य महिलाएं हैं और उनकी ऋण वापसी की औसत दर 95 प्रतिशत से भी ज्यादा है। देश में हर घंटे 400 नयी महिलाएं इन समूहों में शामिल हो रही हैं, जो कि एक सामाजिक क्रांति है।

बहु-आयामी विकास

माइक्रो-फाइनांस के जरिये गरीबों के सिर्फ आर्थिक स्तर में ही नहीं, बल्कि व्यक्तिगत जीवन के सभी पहलुओं में सर्वांगीण विकास हो रहा है। केरल राज्य में कुटुंबश्री कार्यक्रम में शामिल महिलाएं आर्थिक दृष्टि से स्वावलंबी होने के साथ-साथ अपने गांवों में स्वास्थ्य, स्वच्छता, प्रौढ़ शिक्षा आदि क्षेत्रों में भी क्रांति ले आयी हैं। स्वयं-सहायता समूहों से जुड़े ग्रामीण अर्धशिक्षित व्यक्ति अपने आय-व्यय का हिसाब-किताब खुद संभाल रहे हैं, लिखापढ़ी सीख रहे हैं तथा छोटे-मोटे पैमाने पर सामूहिक क्रियाकलापों का प्रबंधन भी कर रहे हैं। वे लोग जिनकी जानकारी अब तक अपनी घर-गृहस्थी तक ही सीमित थी, माइक्रो-फाइनांस के कारण आज वे अपने परिवेश के प्रति सचेत हो रहे हैं तथा उनकी जिज्ञासु कौतूहलता धीरे-धीरे अपने कुटुंब और गांव की सीमाओं के पार विस्तारित हो रही है। कई बैंकों द्वारा आजकल ग्रामीण इलाकों में प्लास्टिक कार्ड के जरिये सूक्ष्म ऋण उपलब्ध किए जा रहे हैं। जिन गांवों में बिजली तक नहीं थी, वहीं आज लोग ऋण उठाने के लिए इलेक्ट्रॉनिक कार्ड इस्तेमाल कर रहे हैं।

गरीबी से विश्व शांति की ओर

यह एक अनोखी बात है कि माइक्रो-फाइनांस के जरिये बांग्लादेश में आर्थिक क्रांति लाने वाले डॉ. मुहम्मद यूनुस को अर्थशास्त्र के लिए नहीं, बल्कि विश्व-शांति के लिए वर्ष 2006 का नोबेल पुरस्कार मिला है। उन्हें पुरस्कार प्रदान करते हुए नोबेल समिति ने यह कहा कि माइक्रो-फाइनांस करोड़ो लोगों को गरीबी-चक्र से मुक्ति दिला सकता है, जो विश्व शांति की ओर मानव समाज का सबसे बड़ा कदम होगा। 'क्योंकि दुनिया में स्थायी शांति तब तक हासिल नहीं की जा सकती जब तक कि जनसंख्या का एक बहुत बड़ा भाग गरीबी के जाल से बाहर नहीं निकल पाता। व्यष्टि-वित्त के जरिये समाज के इस निचले तबके के विकास के साथ ही लोकतंत्र और मानवाधिकार का मार्ग प्रशस्त हो सकता है।' सामाजिक न्याय, साम्य-संहति तथा विश्व-शांति प्रतिष्ठा क्षेत्र में माइक्रो-फाइनांस की भूमिका को स्वीकार

करते हुए संयुक्त राष्ट्रसंघ वर्ष 2005 को अंतरराष्ट्रीय व्यष्टि-वित्त वर्ष घोषित कर चुका है।

समस्याएं और चुनौतियां

इन दिनों माइक्रो-फाइनेंस के क्षेत्र में वाणिज्य बैंकों के प्रवेश से जहां व्यष्टि ऋणग्रहीताओं को बेहतर पेशेवर ग्राहक सेवा तथा सुलभ दर पर ऋण उपलब्ध हो रहे हैं, वहीं दूसरी ओर इन वाणिज्य बैंकों की बाज़ार अभिमुखी व्यापारिक प्रतिस्पर्धा के कारण व्यष्टि वित्त संस्थाएं धीरे-धीरे समाज के गरीब जरूरतमंद लोगों से दूर होती जा रही हैं। अक्सर व्यष्टि ऋण का फायदा गलत हाथों में चला जाता है। उड़ीसा तथा कर्नाटक में आसान बैंक ऋण का लाभ उठाने के लिए रातों रात हज़ारों ऐसे स्वयं-सहायता समूह खड़े हो गये जो कि कुछ निहित-स्वार्थ रखने वाले व्यक्तियों द्वारा व्यापारियों के लिए पैसा जुटाने हेतु ही बनाये गये थे। व्यष्टि-वित्त संस्थाओं को ऐसे धोखेबाज समूहों से सावधान रहना होगा।

फिलहाल माइक्रो-फाइनांस में ब्याज दर अत्यधिक है, जबकि बांग्लादेश में ग्रामीण बैंक 15% ब्याज लेता है, बोलिविया में बांको सोलो 45% और इंडोनेशिया में केकामतान बैंक 60% तक ब्याज लेते हैं। भारत में वाणिज्य बैंकों को नाबार्ड से 7.5% ब्याज पर रिफाइनेंस मिलता है, जिससे वाणिज्य बैंक गैर-सरकारी संस्थाओं को 10-15% ब्याज पर, गैर-सरकारी संस्थाएं स्वयंसहायता समूहों को 12-24% ब्याज पर और स्वयंसहायता समूह अपने सदस्यों को 24 से 36% ब्याज पर उधार देते हैं। सिडबी द्वारा गैर-सरकारी संस्थाओं को 9% ब्याज पर दी जाने वाली ऋणराशि जब तक गरीब ग्रामीण उपभोक्ताओं के पास पहुंचती है, उस पर 30% से भी ज्यादा ब्याज लग जाता है। अनेक व्यष्टि वित्त संस्थाएं ऐसी भी हैं जो पाश्चात्य देशों से ढेर सारी अनुदान राशि (सब्सिडी) हासिल कर व्यष्टि ऋण के बहाने गरीबों को ऊंची ब्याज दर पर उधार देकर उन्हें लूट रहे हैं।

अक्सर व्यष्टि वित्त संस्थाओं के खिलाफ रिश्वतखोरी तथा समय पर ऋण न चुकाने पर उपभोक्ताओं से दुर्व्यवहार, अश्लील कथन, मारपीट आदि किए जाने की शिकायतें आती हैं। इससे घबराकर कभी-कभी गरीब किसान गांव से पलायन करते हैं या आत्महत्या भी कर लेते हैं। उपभोक्ताओं से शिकायत मिलने पर आंध्रप्रदेश की दो प्रमुख व्यष्टि वित्त संस्थाओं को सरकार की ओर से चेतावनी भी दी जा चुकी है। यह चिंता की बात है, क्योंकि देश के लाखों स्वयंसहायता समूहों से जुड़ी करोड़ों गरीब अनपढ़ महिलाओं के ऋण-संस्थाओं द्वारा शोषित होने की काफी संभावनाएं हैं। ग्रामीण लोग सीधे-साधे होते हैं और ऋण चुकाने के लिए उनके ऊपर दबाव डालने से या धमकी देने से अक्सर वे साहूकारों से अत्यधिक ब्याज पर उधार लेकर व्यष्टि वित्त संस्थाओं का ऋण चुकाने के लिए मजबूर हो जाते हैं- जिससे कि माइक्रो-फाइनांस का महत उद्देश्य हासिल नहीं हो पाता।

कुछ प्रस्तावनाएं

- गरीबों तक ऋणराशि पहुंचा देने से ही व्यष्टि वित्त संस्थाओं की जिम्मेदारी खत्म नहीं हो जाती। उन्हें ऋणराशि का सही इस्तेमाल करना भी सिखाना होगा, ताकि वे आत्मनिर्भर बनकर समय पर ऋण की वापसी भी कर सकें। अमेरिका, इंग्लैंड, कनाडा, मलेशिया तथा सिंगापुर जैसे राष्ट्रों में 'ऋण सलाह' की व्यवस्था है और वहां सभी बैंकों द्वारा ऋण-ग्रहीताओं को निःशुल्क परामर्श दिया जाता है। भारत में बैंक सिर्फ बड़ी कंपनियों तथा लघु व मध्यम उद्योगों को ऋण सलाह देते हैं। गरीब महिलाओं और किसानों के लिए भी ऋण सलाह की व्यवस्था की जानी चाहिये। ऋण सलाह का लक्ष्य सिर्फ बैंक के ऋण-संबंधी उत्पादों को बेचना ही नहीं, अपितु गरीबी चक्र में फंसे लोगों को ऋण लेने से रोकना भी होना चाहिए।
- गरीब ग्रामीण उपभोक्ताओं से ऋण वसूली के लिए उन्हें धमकी-डर न दिखाकर उनसे भद्रतापूर्ण बरताव करने के लिए सूक्ष्म वित्त संस्थानों के ऋण-अधिकारियों के लिए एक आचरण संहिता लागू की जानी चाहिए।
- चूंकि स्वयं सहायता समूहों में से 90 प्रतिशत महिलाओं द्वारा संचालित हैं, उन महिलाओं को लिखापढ़ी, हिसाब-किताब तथा कारोबार प्रबंधन का न्यूनतम ज्ञान दिलाने के लिए गैर-सरकारी संस्थाओं को नियोजित किया जाना चाहिए।

- फिलहाल माइक्रो-फाइनांस संस्थाएं सूक्ष्म ऋण के लिए जितना जोर दे रही हैं, सूक्ष्म जमा के ऊपर उतना नहीं। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि जब तक गरीब व्यक्ति अपनी बचत राशि को कोई लाभप्रद खाते में जमा नहीं कर पाता, तब तक वह आत्मनिर्भर नहीं बन पाएगा।
- ऊंची ब्याज दरों को कम करने के लिए व्यष्टि वित्त संस्थाओं को अपने प्रशासनिक खर्चादि कम करने होंगे और यह संभव होगा सूक्ष्म-ऋण वितरण के लिए अत्याधुनिक इलेक्ट्रॉनिक प्रणाली जैसे प्लास्टिक कार्ड का प्रयोग होने पर।
- जो गरीब व्यक्ति, किसान क्लब या गैर-सरकारी संस्थादि अपने इलाकों में माइक्रो-फाइनेंस के जरिये उल्लेखनीय सफलता लाने में कामयाब हो रहे हैं, उन्हें राष्ट्रीय स्तर पर पुरस्कृत और सम्मानित कर अन्य व्यक्तियों व संस्थाओं को अभिप्रेरित किया जा सकता है।
- देश के हर जिले में 100 से 150 स्वयं सहायता समूहों को लेकर स्वयं सहायता फेडरेशन या संघों का गठन किया जाना चाहिए, ताकि ऋण-वितरण में आसानी होने के अलावा सदस्यों के लिए बड़ी मात्रा में उर्वरक आदि कृषि साधन सस्ते में खरीदा जा सके और कृषि उत्पादों का विपणन भी आसान हो सके। आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु में ऐसे कई संघ स्थापित हुए हैं, जिससे गरीब सदस्यों को अपेक्षाकृत सस्ते दरों पर ऋण मिल पाता है।

लक्ष्य अभी भी दूर है

भारत में माइक्रो-फाइनांस का विस्तार पड़ोसी बांग्लादेश, थाइलैंड तथा इंडोनेशिया जैसे राष्ट्रों के मुकाबले काफी कम है। व्यष्टि ऋण का फैलाव आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, कर्नाटक तथा केरल जैसे कुछ राज्यों तक ही सीमित है। पूर्व, उत्तर-पूर्व तथा केंद्रीय भारत में केवल 8 प्रतिशत लोगों के पास ऋण खाते हैं। विश्व बैंक के अनुसार भारत के सबसे बड़े दो राज्यों उत्तर प्रदेश व मध्य प्रदेश में 87 फीसदी जरूरतमंद लोगों को ऋण उपलब्ध नहीं है। पूरे भारत में अभी भी 73 प्रतिशत किसानों के पास माइक्रो-फाइनांस पहुंच नहीं पाया है।

माइक्रो फाइनांस संस्थाओं की तमाम कोशिशों के बावजूद देश में आज गरीबी बनी हुई है, कृषक आत्महत्या कर रहे हैं और क्षेत्रीय असंतुलन बढ़ता जा रहा है। अभी भी बृहद स्तर पर गरीबों को लाभ पहुंचाने में माइक्रो-फाइनांस सफल नहीं हुआ है, क्योंकि जरूरतमंद लोगों को फिलहाल मिलने वाली व्यष्टि ऋण राशि बहुत कम है- औसतन लगभग 1500 से 2000 रुपये प्रति जरूरतमंद- जो किसी व्यक्ति को गरीबी चक्र से बाहर निकालने में बिलकुल असमर्थ है। आजकल एक छोटा सा उद्यम शुरू करने के लिए भी 20 से 25 हजार रुपये की जरूरत पड़ जाती है। नाबार्ड टास्क फोर्स के मुताबिक भारत में एक गरीब परिवार को औसतन कम से कम 6000 से 9000 रुपये तक की व्यष्टि ऋण की जरूरत है। इसका मतलब है देश के सभी लोगों तक माइक्रो फाइनांस पहुंचाने के लिए व्यष्टि संस्थाओं को अपने कारोबार में 500 प्रतिशत अभिवृद्धि लानी पड़ेगी, क्योंकि भारत में फिलहाल कुल 50,000 करोड़ रुपये से भी ज्यादा व्यष्टि ऋण की मांग है।

संयुक्त राष्ट्रसंघ के सहस्राब्दिक विकास लक्ष्यों में गरीबी हटाने पर सबसे ज्यादा बल दिया गया है। वर्ष 2015 तक गरीबों की संख्या 50 प्रतिशत कम करने का लक्ष है। राष्ट्रसंघ के एक सर्वेक्षण के अनुसार विश्व जनसंख्या का पांचवां हिस्सा (करीब 130 करोड़ लोग) आज भी भयावह गरीबी-चक्र में फँसा हुआ है, जिनकी रोजाना आय एक डालर से भी कम है। इसका एक बड़ा हिस्सा एशियाई राष्ट्रों में है। इन करोड़ों लोगों को आत्म-निर्भर बनाकर, इज्जत की जिंदगी दे कर, दूसरों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर विश्व-शांति की ओर ले जाने में आज माइक्रो-फाइनांस ही एकमात्र विकल्प है।

पुस्तक का नाम	:	**वित्तीय समावेशन के विविध आयाम**
संपादक	:	श्रीमती पी. कुमार
		सुश्री रूपम मिश्र
		डॉ. पुष्पकुमार शर्मा
प्रकाशक	:	आधार प्रकाशन
मूल्य	:	225/- रुपये

हिंदी में बैंकिंग और वित्तीय विषयों से संबंधित संदर्भ साहित्य उपलब्ध कराने की दिशा में 'बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन' जैसी स्तरीय पत्रिका के विशेषांकों को पुस्तकाकार रूप देने के क्रम में प्रकाशित की गई इस पुस्तक को पढ़ने से जो सबसे पहली बात आकर्षित करती है, वह है- इसकी मौलिकता और स्तरीयता।

इस पुस्तक में संकलित लेखों की एक और बड़ी विशेषता है, सैद्धांतिक विवेचन के साथ ही उससे संबंधित व्यवहारिक पक्षों का विस्तार से विश्लेषण किया जाना। पुस्तक के सभी लेख 'वित्तीय समावेशन' तथा उसके विभिन्न पहलुओं के सैद्धांतिक विश्लेषण से ज्यादा इसके व्यावहारिक पक्षों पर मौलिक चिंतन प्रस्तुत करते हैं, जिनमें लेखक के शोध तथा विषय के प्रति उनकी स्पष्ट समझ से विकसित मौलिक स्थापनाएं हैं।

आज वित्तीय और बैंकिंग क्षेत्र में चर्चित शब्द वित्तीय समावेशन की अवधारणा बैंकिंग सुविधाओं को सभी के लिए उपलब्ध कराने की योजनाओं और उनके कार्यान्वयन से जुड़ी हुई है। इस संदर्भ में वित्तीय समावेशन बैंकिंग सुविधाओं से वंचित लोगों को ये सुविधाएं उपलब्ध कराना मात्र नहीं है, बल्कि यह समस्त बैंकिंग उद्योग के लिए एक नयी दृष्टि है, एक नया मिशन है, जिसके माध्यम से बैंकिंग के बदलते स्वरूप और वैश्वीकरण, खुले बाज़ार तथा अर्थव्यवस्था के नए आयामों के बीच बैंकिंग-कारोबार के विस्तार, बैंकों के लिए नए ग्राहक वर्ग के निर्माण, बैंकिंग उत्पादों और सेवाओं के निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए किए जाने वाले प्रयासों तथा सबसे अधिक राष्ट्र के विकास में सभी जनों की सहभागिता सुनिश्चित कर उस विकास को सच्चा और सार्थक रूप दिए जाने की मुहिम को एक नयी गति दी जा सकती है। विश्व की तीसरी आर्थिक महाशक्ति बनने की तैयारी करने वाले हमारे देश के समग्र विकास में जब तक इस आम जन की सहभागिता नहीं होती और आर्थिक विकास के लाभ उस बड़ी आबादी तक नहीं पहुंचते तब तक हमारा विकास अधूरा है। अशिक्षा, अज्ञानता, गरीबी और बुनियादी सुविधाओं के अभाव के कारण वित्तीय सुविधाओं से वंचित जनसंख्या का यह बड़ा भाग आज भी देश के विकास से, देश की आर्थिक गतिविधियों से नहीं जुड़ पाया है। उन्हें आर्थिक गतिविधियों से जोड़ने के लिए यह आवश्यक है कि उन्हें अच्छे स्वास्थ्य और उनकी शैक्षणिक योग्यता के विकास पर ध्यान दिया जाए। एक व्यापक अभियान के माध्यम से उस वर्ग के लोगों की मानसिकता में परिवर्तन तथा वित्तीय सुविधाओं की समझ विकसित करने के प्रयासों से वित्तीय समावेशन की प्रक्रिया में गति आ सकती है। इस दृष्टि से मानव संसाधन का विकास और वित्तीय समावेशन का महत्वपूर्ण संबंध है। देश का समग्र आर्थिक और सामाजिक विकास देश की शिक्षित, स्वस्थ, कुशल और अपने अधिकारों तथा कर्तव्यों के प्रति जागृत मानव संसाधन पर ही टिका हुआ है। मानव संसाधन और वित्तीय समावेशन की प्रक्रिया पर अपने मौलिक विचारों को व्यक्त करते हुए डॉ. रमाकांत शर्मा ने अपने लेख 'वित्तीय समावेशन और मानव संसाधन विकास' में वित्तीय समावेशन संबंधी विमर्श को एक नयी दिशा दी है। सही मायने में, साक्षरता अभियान, शिक्षा के प्रसार तथा वित्तीय शिक्षण के माध्यम से, बचत, ऋण, बीमा, भुगतान, धन प्रेषण जैसी बैंकिंग सेवाओं को वहनीय लागत पर समाज के गरीब और अल्प आय वाली विशाल आबादी तक पहुंचाकर अर्थात वित्तीय समावेशन की प्रक्रिया से जोड़कर ही उस बड़ी आबादी को सच्चे अर्थों में विकास की धारा से जोड़ा जा सकता है। इसके लिए हमें सबसे पहले वित्तीय समावेशन के दूसरे पहलू वित्तीय वंचन के कारणों

की पड़ताल करनी होगी, उन परिस्थितियों का विश्लेषण करना होगा जिनके कारण देश की बहुत बड़ी आबादी आज भी वित्तीय और बैंकिंग सेवाओं से वंचित है। वित्तीय वंचन और उसके कारणों के बारे में विस्तार से विवेचन करते हुए श्री विजय प्रकाश श्रीवास्तव अपने लेख 'वित्तीय समावेशन एवं वित्तीय वंचन' में इसका प्रमुख कारण अशिक्षा ही मानते हैं- 'वित्तीय वंचन के लिए बहुत से कारणों को उत्तरदायी ठहराया जा सकता है। एक प्रमुख कारण ग्रामीण आबादी के पास जानकारी का अभाव होना है। भारतीय ग्रामीण जनसंख्या की साक्षरता दर अभी भी 25 प्रतिशत से आगे नहीं बढ़ पाई है। इस वर्ग के एक बड़े हिस्से को बैंक से मिलने वाली सुविधाओं के विषय में पता नहीं है। फलस्वरूप वे अपने इलाके के महाजनों के चंगुल में फंसे हुए हैं, जो उनका शोषण करते हैं और उन्हें सही सलाह नहीं देते।'

श्री श्यामलाल गौड़ ने अपने लेख 'वित्तीय समावेशन और सामाजिक बैंकिंग' में सामाजिक बैंकिंग के विभिन्न पहलुओं तथा वित्तीय समावेशन के साथ उसके अंतर-संबंधों के बारे में मौलिक चिंतन प्रस्तुत किया है। भारत जैसे देश में, जहां की बड़ी आबादी अभी भी शिक्षा, नियमित आय के स्रोतों तथा भरण-पोषण की बुनियादी जरूरतों से वंचित है, जहां ग्रामीण और दूरस्थ स्थानों में विकास की किरण अभी भी नहीं पहुंची है, बिजली, सड़क आदि बुनियादी सुविधाओं का घोर अभाव है, वहां वित्तीय समावेशन प्रक्रिया पूरी करने में अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ेगा। इन चुनौतियों को ध्यान में रखकर विभिन्न बैंकों तथा भारतीय रिज़र्व बैंक ने वित्तीय समावेशन की दिशा में अनेक प्रयास किए हैं। डॉ. रामप्रकाश सिंहल ने अपने लेख 'वित्तीय समावेशनः चुनौतियां और समाधान' में इन चुनौतियों तथा भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा तथा अन्य स्तरों पर किए गए प्रयासों का सिलसिलेवार वर्णन किया है वहीं श्री काज़ी मुहम्मद ईसा के लेख 'वित्तीय समावेशनः विभिन्न बैंकों के प्रयास' में वित्तीय समावेशन के क्षेत्र में विभिन्न बैंकों द्वारा किए जा रहे प्रयासों का महत्वपूर्ण विवरण दिया गया है।

इसी प्रकार डॉ. सुरेश कुमार ने 'भारत में वित्तीय समावेशन और लघु वित्त' शीर्षक अपने लेख में वित्तीय समावेशन की एक बड़ी चुनौती गरीबों और वंचितों तक वित्तीय संस्थाओं के नहीं पहुंच पाने तथा उस बड़े वर्ग के लोगों के अनुरूप वहनीय लागतों पर बैंकिंग उत्पादों को उपलब्ध नहीं करा पाने की ओर संकेत करते हुए वित्तीय समावेशन में लघु वित्त की महत्वपूर्ण भूमिका का विश्लेषणात्मक विवेचन प्रस्तुत किया है। सूक्ष्म वित्त के विभिन्न पहलुओं की महत्वपूर्ण जानकारी देते हुए डॉ. कुमार सूक्ष्म वित्त के माध्यम से वित्तीय समावेशन की प्रक्रिया को सहज बनाने की बात करते हैं। इसी संदर्भ में वे सूक्ष्म वित्तीय संस्थाओं द्वारा गरीबों को सूक्ष्म ऋण देने की प्रक्रिया पर भी सवाल उठाते हैं- 'सूक्ष्म वित्तीय संस्थाएं गरीबों के लिए ऋण अधिक सहज बनाने हेतु ऋणों पर वित्तीय सहायता यानी सब्सिडी दे सकती हैं। अनेक सूक्ष्म ऋण संस्थाएं ऐसा करती भी हैं। किंतु संस्था तब स्थायी सब्सिडी पर निर्भर हो जाती है। सब्सिडी आधारित कार्यक्रम हमेशा बज़ट में कटौतियों के खिलाफ अपनी गतिविधि बनाए रखने के लिए संघर्ष करते हैं और उल्लेखनीय रूप से शायद ही विकास कर पाते हैं।' वे सूक्ष्म वित्तीय संस्थाओं के साथ ही सरकारों की भूमिका की पड़ताल करते हैं- 'अब जबकि सूक्ष्म वित्त काफी लोकप्रिय हो गया है, सरकारें सूक्ष्म ऋण प्रदान करने के लिए बचत बैंकों, विकास बैंकों, डाकघर बैंकों और कृषि बैंकों का इस्तेमाल करने के लिए आतुर नज़र आती हैं। यह कोई अच्छा विचार नहीं है, जब तक कि सरकार के पास भूतकाल की कमियों को दूर करने की स्पष्ट स्वीकार्यता और वैसा करने के स्पष्ट साधन न हों। अनेक सरकारों ने बहुपक्षीय एजेंसियों से सूक्ष्म वित्त संस्थाओं को निधियां पहुंचवाने के लिए शीर्ष संगठन बनवा दिए हैं। शीर्ष संगठन काफी जटिल हो सकते हैं और लघु वित्त के क्षेत्र में उनकी सफलताओं के कम ही उदाहरण मिलते हैं।

आज का युग सूचना प्रौद्योगिकी का युग है। बैंकिंग के बदलते स्वरूप में सूचना प्रौद्योगिकी के विकास की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इसलिए बैंकिंग प्रणाली तथा बैंकिंग के विभिन्न उत्पादों में प्रयुक्त सूचना प्रौद्योगिकी वित्तीय समावेशन की प्रक्रिया में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। सूचना प्रौद्योगिकी आधारित सभी वित्तीय सेवाओं तथा नवोन्मेषी बैंकिंग उत्पादों को वहनीय लागत पर वित्तीय दृष्टि से वंचित वर्ग तक पहुंचाकर वित्तीय समावेशन के लक्ष्यों को प्राप्त करने में मदद मिल सकती है।

श्री के. पी. तिवारी ने अपने लेख 'वित्तीय समावेशन और सूचना प्रौद्योगिकी' में वित्तीय समावेशन में बैंकिंग की आधुनिक सुविधाओं-एटीएम, नेट बैंकिंग, मोबाइल बैंकिंग, स्मार्ट कार्ड आधारित बैंकिंग परिचालन आदि की महत्वपूर्ण भूमिका को रेखांकित किया है।

सुश्री अंशुप्रिया अग्रवाल ने अपने लेख 'वित्तीय समावेशन : एक परिचयात्मक दृष्टिकोण' में वित्तीय समावेशन की योजनाओं के संदर्भ में विभिन्न मॉडलों (व्यवसाय सुलभकर्ता (फेसिलिटेटर) मॉडल, व्यवसाय संपर्की मॉडल, स्वयं सहायता समूह बैंक संपर्क मॉडल, गैर सरकारी संगठन/लघु वित्त संस्था थोक ऋण मॉडल) की चर्चा करते हुए वित्तीय समावेशन के भारतीय परिदृश्य और अंतरराष्ट्रीय उदाहरणों का विस्तार से विवेचन प्रस्तुत किया है।

श्री रवि दिवाकर गिरहे ने अपने लेख 'वित्तीय समावेशनः स्थिति और भावी परिदृश्य' में वित्तीय समावेशन की वर्तमान स्थिति तथा इसको गति देने में आने वाली बाधाओं की चर्चा करते हुए इसके समाधान के लिए विभिन्न उपाय सुझाए हैं। श्री गिरहे ने अपने लेख में वित्तीय समावेशन के व्यावहारिक पक्षों तथा इसके भावी परिदृश्य पर विस्तार से चर्चा करते हुए वित्तीय समावेशन को कैसे सार्थक और प्रभावी रूप दिया जाए इस संबंध में अनेक महत्वपूर्ण सुझाव दिए हैं।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में वित्तीय समावेशन की प्रक्रिया को प्रभावी बनाने में भारतीय बैंकों के समक्ष अनेक चुनौतियां है। बिजली-सड़क जैसे विकास के महत्वपूर्ण पक्षों से वंचित देश के पिछड़े क्षेत्रों में, दूरदराज गांवों में बैंकों को आधारभूत सुविधाओं की कमी, अशिक्षा, गरीबी, वित्तीय शिक्षा की कमी, बैंकिंग और वित्तीय सुविधाओं की जानकारी का अभाव तथा वंचित वर्ग को दी जाने वाली ऋण सुविधाओं और सामाजिक बैंकिंग के प्रति बैंकों की मानसिकता आदि कुछ ऐसे सवाल हैं जो वित्तीय समावेशन के लक्ष्यों की पूर्ति में सबसे बड़े बाधक तत्व बन सकते हैं। डॉ. नरेंद्र पाल सिंह के लेख 'भारतीय बैंकों के समक्ष चुनौतीः वित्तीय समावेशन' में वित्तीय समावेशन के संदर्भ में उभरने वाली चिंताओं की विस्तार से चर्चा की गई है वहीं श्री विनय बंसल के लेख 'वित्तीय समावेशन और बैंक लाभप्रदता' में वित्तीय समावेशन तथा उससे बैंकों की लाभप्रदता पर पड़ने वाले सकारात्मक प्रभावों और इससे संबंधित भावी रणनीति पर महत्वपूर्ण विचार दिए गए हैं। भारत जैसे देश में आर्थिक और सामाजिक विकास को एक समग्रता देने के लिए वित्तीय समावेशन एक सशक्त माध्यम बन सकता है। सही मायने में भारत आज भी गांवों का देश है। देश की बड़ी आबादी गांवों में बसती है। कृषिप्रधान अर्थव्यवस्था वाले अपने देश के समग्र विकास में एक सशक्त ग्रामीण अर्थव्यवस्था की महत्वपूर्ण भूमिका है। वित्तीय समावेशन के माध्यम से जहां बैंकिंग सुविधाओं से वंचित वर्ग को देश की आर्थिक गतिविधियों से जोड़कर उनके आर्थिक-सामाजिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई जा सकती है वहीं बैंकों के लिए बड़ा ग्राहक वर्ग निर्मित करके बैंकों के कारोबार को व्यापक रूप दिया जा सकता है तथा बैंकों की लाभप्रदता भी बढ़ायी जा सकती है। इस संदर्भ में सुबहसिंह यादव ने अपने लेख 'वित्तीय समावेशन से ग्रामीण सशक्तिकरण की पहल' में वित्तीय समावेशन के माध्यम से किए जाने वाले ग्रामीण सशक्तिकरण के प्रयासों से जुड़ी बैंकों की लाभप्रदता की ओर ध्यान दिलाया है- 'वित्तीय समावेशन केवल एक सामाजिक विकास नहीं है, अपितु बैंकों के लिए एक लाभदायक व्यवसाय भी है। भारत में यह बिना दोहन किया गया बाज़ार है।' इसी तरह श्री राजेंद्र सिंह ने अपने लेख 'वित्तीय समावेशन हेतु वातावरण निर्माण' में वित्तीय समावेशन को गति दिए जाने के लिए तथा समाज के वृहतर वर्ग को बैंकिंग के दायरे में शामिल करने के लिए वित्तीय प्रणाली को प्रतिस्पर्द्धी और गतिशील स्वरूप देकर वित्तीय समावेशन के अनुकूल वातावरण के निर्माण पर बल दिया है।

पुस्तक के अंतिम लेख 'वित्तीय समावेशन : बैंकों की भूमिका' में श्री सुंदर दास जब यह अहम सवाल उठाते हैं 'आंकड़ों के मायाजाल को देखकर किसी के मन में प्रश्न उठ सकता है कि क्या असीमित संख्या में खाते खोलकर वित्तीय समावेशन का लक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है?' तो आर्थिक-सामाजिक असंतुलन की अनेक खाइयों से भरे भारत जैसे देश में वित्तीय समावेशन की अवधारणाओं को कैसे साकार रूप दिया जाए, इसके कार्यान्वयन में क्या-क्या कठिनाइयां आने वाली हैं, इसकी पथरीली राह में कौन-सी चुनौतियां सामने आने वाली हैं, बहुत सारे अनसुलझे सवालों की तरफ ध्यान आकृष्ट करती हैं। लेख में इन्हीं चुनौतियों और सवालों के बीच उनके समाधान और उससे संबंधित उपयोगी सुझाव भी दिए गए हैं। इस तरह पुस्तक के सारे लेख वित्तीय समावेशन से जुड़े अनेक पहलुओं का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करते हैं। वित्तीय समावेशन के स्वरूप, उसके सैद्धांतिक और व्यावहारिक पक्षों से लेकर उससे जुड़ी योजनाओं को लागू करते समय किन-किन सावधानियों पर विचार किया जाना जरूरी है, इसे कैसे एक सार्थक और आउटपुट देने वाला सामाजिक बैंकिंग से जुड़ा कारोबार बनाया जा सके, इन सारी

बातों पर एक सार्थक विमर्श की जमीन तैयार करती है यह पुस्तक।

● कुमार परिमलेंदु सिन्हा
प्रबंधक, भारतीय रिज़र्व बैंक, मुंबई

पुस्तक का नामः		**हिंसा और अस्मिता का संकट**
लेखक	:	अमर्त्य सेन
प्रकाशक	:	राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली
मूल्य	:	295/- रुपये

हिंसा और अस्मिता का संकट नोबल पुरस्कार से सम्मानित लेखक अमर्त्य सेन की बहुचर्चित पुस्तक 'Identity and Violence: The illusion of Destiny' का हिंदी अनुवाद है। महेंद्र कुलश्रेष्ठ ने धारा-प्रवाह हिंदी में अमर्त्य सेन के मौलिक चिंतन को हिंदी पाठकों तक पहुंचाने का अहम कार्य बड़ी जिम्मेदारी के साथ निभाया है।

इस पुस्तक का विषय पहचान अर्थात् अस्मिता से संबंधित विचार और दुनिया में फैली हिंसा के साथ उनके संबंध, बहुसंस्कृतिवाद की प्रकृति, प्रभाव और गुण अथवा अवगुणों की समझ से जुड़ा हुआ है। लेखक ने प्रस्तुत पुस्तक में 'मनुष्य की पहचान' 'पहचान का अर्थ', 'सभ्यताओं की कैद', 'मुस्लिम इतिहास', 'पश्चिम विरोध की समस्या', 'सभ्यता या जेलखाना', 'आंदोलन की सीमाएं', 'बहुसंस्कृतिवाद और स्वतंत्रता', तथा 'सोचने की स्वतंत्रता' जैसे नौ अध्यायों में अस्तित्व अथवा पहचान का प्रश्न और विश्व-भर में तेजी से फैल रही हिंसा की आग के परस्पर संबंधों का गहरा चिंतन प्रस्तुत किया है। उन्होंने अपने विचार राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक तथा साहित्यिक संदर्भों के आम तथा सर्वविदित उदाहरणों के साथ स्पष्ट किए हैं।

अपने अस्तित्व की पहचान सबसे अहम है, परंतु मनुष्य की केवल एक ही पहचान नहीं हो सकती। जाति, धर्म, देश, आर्थिक स्तर, भाषा आदि से संबंधित मनुष्य की कई पहचानें हो सकती हैं। लेखक के अनुसार व्यक्ति को इन विविध पहचानों में से सही पहचान चुनने की क्षमता हासिल करना जरूरी है। लेखक ने इस बात का चयन महत्वपूर्ण बताया है कि अपनी विभिन्न पहचानों में से कौन-सी पहचान को अधिक महत्व दिया जाए। यह चयन किसी नये ज्ञान अथवा जानकारी के हासिल होने पर बदल भी सकता है।

अपने अस्तित्व की पहचान से मनुष्य को न केवल सुकून और खुशियां मिलती हैं बल्कि आत्मविश्वास और ताकत भी मिलती है। अपनी पहचान, किसी समूह के अंग होने की पहचान, किसी कौम का हिस्सा होने की पहचान इसीलिए कभी-कभी घातक भी हो सकती है। लेखक ने प्रारंभिक अध्यायों में विस्तार से यह विवेचन किया है कि दूसरे से अलग होने का भाव, विशिष्ट होने का अहसास मनुष्य को दूसरे समूहों, देशों, व्यक्तियों से भिन्न होने का भाव देता है। दो समूहों की आपसी नजदीकी दूसरे समूहों से दूरी को जन्म देती है।

अमरीका में 11 सितंबर को हुए हादसे से पाश्चात्य और इस्लामी सभ्यताओं के बीच द्वंद्व की चर्चा छिड़ गई। लेखक ने इस बारे में कहा है कि इस तरह एक सभ्यता के सदस्य के रूप में किसी की पहचान का अर्थ है उसे एक ही आयाम देखना। आज छोटे-बड़े संघर्षों को सभ्यताओं के द्वंद्व के रूप में देखा जाता है जो दूसरे विचारों को उपेक्षित कर देता है और वास्तविक कारणों तक हमें पहुंचने नहीं देता। लेखक ने यही स्पष्ट किया है कि किसी एक ही पहचान या अस्तित्व के रूप में किसी व्यक्ति या समूह को देखना ही आतंकवाद और हिंसा की समस्या की जड़ है।

भारतीय कला, साहित्य, संगीत, फिल्म और भोजन के क्षेत्र में हिंदू तथा मुसलमान दोनों ने सम्मिश्र प्रभाव पैदा किया है। दैनंदिन जीवन और सांस्कृतिक गतिविधियों में दोनों भिन्न धर्म के होते हुए भी एक-दूसरे से अलग दिखाई नहीं देते। इसके विपरीत, धार्मिक पहचान के तहत एक ही धर्म को माननेवाले लोगों के सामाजिक व्यवहार में भिन्नता हो सकती है; जैसे-सऊदी अरब की ग्रामीण मुसलमान स्त्रियों के रीति-रिवाज़ और तुर्की के नगरों में रह रहीं स्त्रियों के रीति-रिवाज़ों में बड़ा अंतर है। हर धर्म के मानने वालों में जबरदस्त योद्धा और शांति के संस्थापक दोनों ही बड़ी संख्या में होते हैं। इसकी वजह है धर्म के अलावा उनकी अन्य पहचानों का प्रभाव। अपनी धार्मिक पहचान के अलावा अन्य पहचानों को महत्व न देने के कारण आतंकवाद पनपता है।

पांचवें अध्याय में लेखक ने पश्चिम विरोध की समस्या, उपनिवेशी मानसिकता, एशियाई मूल्यों की वास्तविकता एवं कट्टरवाद तथा पश्चिम के महत्व के बारे में विवेचन किया है।

उन्होंने लिखा है कि आज-कल पश्चिम का बहुत विरोध किया जाता है, जिसका कारण है उपनिवेशवाद का इतिहास। उपनिवेशी शासकों के अत्याचार के कारण सामाजिक विश्वास तथा आत्मविश्वास नष्ट हुआ। परंतु आज यह सोचकर कुछ फायदा नहीं कि हमारे पूर्वज किस प्रकार उपनिवेशवादियों के शिकार हुए। यह प्रतिक्रियात्मक आत्मबोध पश्चिम के साथ लड़ने के लिये प्रेरित कर सकता है। पश्चिम के निवासियों को और उनके प्रतीकों को नष्ट करने के लिए अपने जीवन तक को नष्ट कर देना यह दर्शाता है कि उनकी पश्चिम विरोधी भावना की तीव्रता सभी मूल्यों से ऊपर है। लेखक का मानना है कि उपनिवेशी विचारों की प्रशंसा या विरोध दोनों ही स्थितियों से मुक्त होना जरूरी है। इसके लिए अकेली पहचानों तथा प्राथमिकताओं से छुटकारा पाना आवश्यक है।

सांस्कृतिक अंतर्संबंधों की चर्चा करते समय लेखक कहते हैं कि हमारी सांस्कृतिक पहचानें बहुत ही महत्वपूर्ण हो सकती हैं परंतु वे हमारी समझ और प्राथमिकताओं पर पड़ने वाले अन्य प्रभावों से बिल्कुल मुक्त नहीं हो सकतीं। वह अकेली सर्वशक्तिमान निर्णायक नहीं हो सकती। उसके भीतर उसके अनेक रूप हो सकते हैं। संस्कृति स्थिर या शांत नहीं होती और वह सामाजिक बोध तथा निर्णायक तत्वों के साथ परस्पर क्रियाएं करती है।

'आंदोलन की सीमाएं' अध्याय के अंतर्गत लेखक ने वैश्वीकरण के बारे में चर्चा की है। वैश्वीकरण को सामान्यतः पश्चिम की देन या पश्चिमीकरण की प्रक्रिया माना जाता है। परंतु लेखक का मानना है कि वैश्वीकरण हज़ारों वर्षों से संसार की प्रगति में योगदान करता आ रहा है। यह न तो पश्चिमी है और न ही नया। यात्रा, व्यापार, सांस्कृतिक फैलाव, ज्ञान आदि दृष्टि से अनेक देशों की उन्नति में वैश्विक अंतर्संबध बहुत योगदान करते रहे हैं। वैश्वीकरण के कारण उभरा गरीबी और असमानता का प्रश्न लाभ के वितरण से जुड़ा है, जिसका सामना रचनात्मक उपायों, नयी संस्थाओं की स्थापना तथा सहयोगी योजनाओं से किया जा सकता है। सीमापार देशों से आपसी संबंधों को प्रोत्साहन देकर दुनिया आर्थिक दृष्टि से एक-दूसरे के नज़दीक पहुंच सकेगी।

बहुसंस्कृतिवाद सांस्कृतिक विविधता के प्रति सहिष्णु रहता है। अपनी इच्छा से परंपरावादी या परंपरा से बिल्कुल विरोधी जीवन बिताने से बहुसंस्कृतिवाद किसी को रोक नहीं सकता। परंतु बहुसंस्कृतिवाद के लिए आवश्यक है कि सभी समुदाय के लोगों को विभिन्न धर्मों, मतों और संप्रदायों की जानकारी हासिल करने की सुविधा उपलब्ध हो तथा तार्किक विचारपूर्वक संस्कृति का चयन कर सकने की शिक्षा लोगों को मिले। धर्माधारित स्कूल अलगाव तथा धार्मिक हिंसा को बढ़ावा देते हैं। लेखक के मतानुसार मनुष्य की सामाजिक पहचान के लिए बहुसंस्कृतिवाद की मिथ्या धारणाओं से बचने हेतु तथा इन धारणाओं से प्रोत्साहित होनेवाली विभाजक प्रवृत्तियों को पनपने से रोकने हेतु बहुसंस्कृतिवाद पर पुनर्विचार की आवश्यकता है।

अंतिम अध्याय 'सोचने की स्वतंत्रता' के प्रारंभ में लेखक ने अपनी 11 साल की आयु में देखी हत्या की घटना का उल्लेख किया है जिसे इस पुस्तक में प्रस्तुत चिंतन के बीज के रूप में देखा जा सकता है। स्वतंत्रतापूर्व हिंदू-मुस्लिम दंगों के समय लेखक ने एक गरीब मजदूर क़ादिर मियां की हत्या देखी, जो हिंदू गुंडों ने केवल उसकी धार्मिक पहचान 'मुसलमान' होने के आधार पर की थी। उस वक्त सैकड़ों हिंदू-मुसलमानों की हत्याएं हुईं। स्वयं को केवल हिंदू या मुसलमान मानकर दूसरे समुदाय के लोगों की हत्याएं हुईं। कादिर मियां की हत्या इसलिए हुई कि वह दुश्मन समुदाय का सदस्य था। दूसरी वजह उसकी गरीबी भी थी। लेखक यह महसूस करता है कि 11 साल की छोटी आयु में यह हिंसा उसके दिमाग की समझ से परे थी और आज बड़ा हो जाने के बाद भी उसकी समझ के बाहर है।

अंत में लेखक यह आशावाद व्यक्त करते हैं कि मनुष्य की एकमेव पहचान से मुक्त पहचान की समझ विकसित करनी होगी जिसके लिए हमारे स्थानीय तथा राष्ट्रीयता से जुड़े सभी संबंध खत्म करने की बिल्कुल आवश्यकता नहीं है। इन सभी निष्ठाओं के साथ-साथ विश्व पहचान भी आरंभ हो सकती है। मनुष्य का क्षुद्रीकरण रोकने के लिए हम एक नई दुनिया की कल्पना कर सकते हैं। आखिर में लेखक ने यह विश्वास व्यक्त किया है कि ग्यारह साल की उम्र में कादिर मियां को बचाने के लिए वे कुछ न कर पाए, लेकिन अब वे एक ऐसी दुनिया की कल्पना अवश्य कर सकते हैं जो पहुंच से बाहर नहीं है और उनकी तथा कादिर मियां की अनेक पहचानों को पुष्ट करती है।

● **सुश्री छाया राजे**
सहायक महाप्रबंधक,
भारतीय रिज़र्व बैंक, मुंबई

लेखकों से

इस पत्रिका का उद्देश्य बैंकिंग और उससे संबंधित विषयों पर हिन्दी में मौलिक सामग्री उपलब्ध कराना है । बैंकिंग विषयों पर हिन्दी में मूल रूप से लिखनेवाले सभी लेखकों से सहयोग मिले बिना इस उद्देश्य की पूर्ति कैसे होगी ? हमें इसमें आपका सक्रिय सहयोग चाहिए । बैंकिंग विषयों पर हिन्दी में मूल रूप से लिखे स्तरीय लेखों की हमें प्रतीक्षा रहती है । साथ ही, अर्थशास्त्र, वित्त, मुद्रा बाज़ार, पूंजी बाज़ार, वाणिज्य, विधि, मानव संसाधन विकास, कार्यपालक स्वास्थ्य, मनोविज्ञान, परा बैंकिंग, कम्प्यूटर, सूचना प्रौद्योगिकी आदि क्षेत्रों से जुड़े विशेषज्ञ इन विषयों पर व्यावहारिक या शोधपूर्ण मौलिक लेख भी हमें प्रकाशनार्थ भेज सकते हैं । प्रकाशित लेखों और पुस्तक समीक्षाओं पर **मानदेय देने** की व्यवस्था है । ***कृपया प्रकाशनार्थ सामग्री भेजते समय यह देख लें कि :-***

- सामग्री ***बैंकिंग और उससे संबंधित विषयों*** पर ही है ।
- उसमें दी गयी जानकारी ***उपयोगी*** और ***अद्यतन*** है एवं ***अधिकतम ४ टंकित पृष्ठों*** में है ।
- लेख यदि संभव हो तो **सी. डी. में आकृति / एपीएस फांट** में भेजने की व्यवस्था की जाए ।
- वह कागज़ के ***एक ओर*** स्पष्ट अक्षरों में ***लिखित*** अथवा ***टंकित*** है ।
- यथासंभव ***सरल और प्रचलित हिंदी शब्दावली*** का प्रयोग किया गया है और अप्रचलित एवं तकनीकी शब्दों के अर्थ कोष्ठक में अंग्रेजी में दिये गये हैं ।
- यह प्रमाणित करें कि लेख ***मौलिक है,*** प्रकाशन के लिए ***अन्यत्र नहीं भेजा गया है*** और 'बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन' में प्रकाशनार्थ प्रेषित है ।
- लेख में शामिल ***आंकड़ों, तथ्यों आदि के संबंध में स्रोत*** का स्पष्ट उल्लेख करें ।
- प्रकाशन के संबंध में यह सुनिश्चित करें कि ***जब तक लेख संबंधी अस्वीकृति की सूचना प्राप्त नहीं होती,*** संबंधित लेख किसी ***अन्य पत्र-पत्रिका में प्रकाशनार्थ न भेजा जाए ।***

प्रकाशकों से

जो प्रकाशक अपनी पुस्तक की समीक्षा करवाना चाहते हैं
वे कृपया अपनी पुस्तकों की **दो प्रतियां** भिजवाने की व्यवस्था करें ।

पाठकों से

इस पत्रिका को आप **निःशुल्क** प्राप्त कर सकते हैं । इसके लिए आपको लिखित रूप में " कार्यकारी संपादक, बैंकिंग चिंतन अनुचिंतन " से अनुरोध करना होगा । आपका पत्र मिलते ही आपका नाम डाक सूची में शामिल कर लिया जाएगा और तदनंतर आपको पत्रिका निरंतर मिलती रहेगी । आपसे अनुरोध है कि अपने सहयोगियों को भी यह जानकारी प्रदान करें तथा अपनी मांग से हमें तत्काल अवगत कराएं ताकि हम तदनुसार प्रतियों का मुद्रण कर सकें । **पुराने पाठक कृपया पत्राचार करते समय अपनी सदस्यता संख्या का उल्लेख अवश्य करें ।**

भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा प्रकाशित
नवीनतम हिन्दी पुस्तक

'वित्तीय समावेशन के विविध आयाम'

पुस्तक मिलने का पता

मै. आधार प्रकाशन प्रा. लि.
एस. सी. एफ. 267, सेक्टर 16
पंचकुला (हरियाणा)

हमारा नया पता

कार्यकारी संपादक
बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन
भारतीय रिज़र्व बैंक
राजभाषा विभाग, केंद्रीय कार्यालय
गारमेंट हाउस, वरली, मुंबई– 400 018.

इस अंक के प्रकाशन में राजभाषा विभाग, केन्द्रीय कार्यालय, भारतीय रिज़र्व बैंक की सहायक महाप्रबंधक (राजभाषा) श्रीमती सावित्री सिंह, प्रबंधक (राजभाषा) श्री के. पी. तिवारी एवं सहायक प्रबंधक (राजभाषा) श्री पंढरीनाथ का सहयोग प्राप्त हुआ।